मासिक

अध्यात्म संदेश

जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक पत्र

वर्ष : 3। अंक : 08 । पृष्ठ : 55 । मूल्य : नि:शुल्क । इंदौर–उज्जैन। बुधवार 1 मार्च 2023 । फाल्गुन/चैत्र मास (1), विक्रम संवत् 2079/80 । इ. संस्करण

प्रेरणा स्रोत
महासिद्ध गुरू गोरक्षनाथ जी

सलाहकार समिति
महंत बालक नाथ योगी जी
गद्दीनशीन महंत, मठ अस्थल बोहर, रोहतक
संसद सदस्य (लोकसभा), अलवर, राजस्थान
कुलाधिपति, श्री बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय (हरियाणा)

महंत पीर योगी रामनाथ जी
भर्तृहरि गुफा, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

महंत डॉ. योगी विलासनाथ जी
अध्यक्ष, श्री गुरू गोरक्षनाथ शिव पंचायतन मन्दिर (ट्रस्ट), गाळणे (महाराष्ट्र)

राष्ट्रसंत बालयोगी उमेशनाथ जी
पीठाधीश्वर-वाल्मीकि धाम, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

प्रधान सम्पादक
योगी शिवनन्दन नाथ

सम्पादक मंडल

वरिष्ठ सम्पादक
डॉ. संतोष खन्ना (दिल्ली)

सम्पादक
डॉ. शकुंतला कालरा (दिल्ली)

उपसम्पादक
श्रीमती सुषमा सागर मिश्रा (लखनऊ)
सुश्री इंदु सिंह "इन्दुश्री" (मध्य प्रदेश)

ग्राफिक्स
IDEAwave COMMUNICATIONS

प्रकाशक एवं स्वामी
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन

- गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउंडेशन सर्वाधिकार सुरक्षित। किसी भी रूप में सामग्री की नकल प्रतिबंधित।
- पत्रिका में प्रकाशित सामग्री का समस्त उत्तरदायित्व लेखकों का है। प्रकाशक, प्रधान संपादक एवं संपादक मंडल इसके लिए किसी भी प्रकार से उत्तरदायित्व नहीं होंगे।
- समस्त विवादों का निस्तारण, मध्य प्रदेश सीमांतर्गत सक्षम न्यायालयों में किया जाएगा।

editor.adhyatmsandesh@gmail.com

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ क्र.
1	संपादकीय	डॉ. शकुंतला कालरा	03
2	भारतीय संस्कृति में होली....	कृष्ण कुमार यादव	05
3	होली की कुंडलिया	प्रो. डॉ. शरद नारायण खरे	08
4	होली रंगरेली आयी रे	डॉ. विष्णुप्रसाद पाठक	08
5	पर्यावरण चिन्तन (स्तम्भ)	डॉ. मेहता नगेन्द्र सिंह	09
6	समकालीन परिवेश में नारी विमर्श	आकांक्षा यादव	10
7	भारत की बेटियाँ	डॉ. विद्यासागर मिश्र 'सागर'	13
8	महिलाओं का सफर	डॉ. अलका शर्मा	14
9	सामाजिक विकास में महिलाओं...	श्रीमति सुषमा सागर मिश्रा	16
10	नारियाँ पुरूषों से नहीं हैं कमतर	लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव	17
11	पतिव्रता मन्दोदरी	डॉ. साधना गुप्ता	19
12	त्यागी और बैरागी भरत	ब्रह्मेश्वर नाथ मिश्र	22
13	तिलक संस्कार	डॉ. अलका यादव	23
14	सकल ताड़ना के अधिकारी	सोनल मंजू श्री ओमर	24
15	बेटियाँ	डॉ. ममता बनर्जी 'मंजरी'	26
16	साहसी मल्हाराव होलकर	डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम	27
17	नवरात्र और नौनिहाल	सुश्री इंदु सिंह 'इंदुश्री'	29
18	प्रकृति, मनुष्य और हमारा चिन्तन	विजय कुमार तिवारी	31
19	रामहि केवल प्रेम प्यारा	डॉ. सन्तोष खन्ना	33
20	गीत	पंकज शर्मा 'तरुण'	35
21	रामकथा अमित गुणकारी	डॉ. शकुंतला कालरा	36
22	सुन्दरकाण्ड की उपयोगिता	डॉ. शारदा मेहता	39
23	क्या है भारतीय संस्कृति में 16...	पंडित कैलाशनारायण	42
24	झूठे का बोलबाला	प्रो. डॉ. दिवाकर दिनेश गौड़	44
25	ग़ज़ल	दिलीप वर्मा 'मीर'	44
26	स्वतंत्रता संग्राम का आदि पुरुष...	रीता रानी	45
27	जीवन की जीवंतता का यथार्थ...	डॉ. अजय शुक्ला	47
28	यात्राएं	डॉ. अरविंद जैन (विद्यावाचस्पति)	51
29	शिव वंदन	व्यग्र पाण्डे	52
30	अटलजी	डॉ. अर्चना प्रकाश	53
31	कोशिश की चिंगारी	सुजाता प्रसाद	54
32	पंच से पक्षकर	अंकुर सिंह	55

संपादकीय

डॉ. शकुंतला कालरा
संपादक (अध्यात्म संदेश)
एसोसियेट प्रोफेसर
मैत्रेयीकॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

समय गतिमान है। गुजरता जाता है। वर्ष-दर-वर्ष बढ़ता जाता है। लेकिन जीवन के विविध रंगों के साथ समय-समय पर आने वाले पर्व जश्न का माहौल बनाकर अगले वर्ष फिर आएंगे यह वायदा देकर चले जाते हैं। अपने वायदे के मुताबिक हर वर्ष की भाँति वसंत ऋतु का सबसे बड़ा रंगों का त्योहार होली फिर आ गया है। वसंत ऋतु स्वयं ही रंगों की ऋतु है। पीली सरसों, लाल पलाश के फूल और फिर होली के अनेक रंग प्यार के रंग। होली फागुन मास की पूर्णिमा को पूरे भारत में धूमधाम से मनाया जाता है। हँसी-खुशी, गाना बजाना तथा हुड़दंग और हर्ष-उल्लास के इस त्योहार को फगुआ, धुलेंडी नाम से भी जाना जाता है। यह त्योहार प्रेम और मिलन का त्योहार है। आपस की वर्ष भर की ईर्ष्या, शत्रुता, नाराजगी भूलकर इस दिन हम गले मिलकर एक दूसरे के मन को बाह्य रंग ही नहीं - भीतर के प्रेम के रंग में रंग भी देते हैं। हमारे यहां होली हर्बल रंगों से ही खेली जाती थी। हर्बल रंग यानि जो प्रकृति की वनस्पतियों और पेड़-पौधों से बनाए जाते हैं। ये रंग हमारी त्वचा को नुकसान नहीं पहुंचाते। पुराने समय से ही हमारे देश में होली खेलने के लिए टेसू के फूलों से बने रंग का उपयोग होता रहा है। ये वही पलाश के फूल हैं जिन्हें एक चूहे के साथ विदुर ने लाख के घर में रहते पाण्डवों के पास एक पिंजरे में रखकर भेजे थे। दुर्योधन पांडवों को रहने के लिए पांच गांव भी देने को तैयार नहीं था। पाँचों पांडव माता कुन्ती सहित जंगल में दुर्योधन द्वारा बनाए गए लाख के भवन में रह रहे थे। दुर्योधन की योजना लाख के घर में उन्हें जिन्दा जलाने की थी। जिसकी खबर विदुर को लग गई। उन्होंने एक खदान को वहां सुरंग बनाकर पांडवों को निकलने का संकेत देने के लिए भेजा। विदुर ने एक पिंजरा, उसमें एक चूहा और कुछ पलाश के फूल भेजे। विदुर के संकेत को युधिष्ठिर समझ गए। यह पिंजरा लाख का घर है और पलाश के फूल आग का प्रतीक हैं। जिस प्रकार चूहा आग लगने पर सुरंग के रास्ते से सुरक्षित बाहर निकल आता है वैसे ही तुम लोग भी आग लगने पर इस सुरंग के रास्ते से सुरक्षित बाहर निकल जाना। दुर्योधन ने अपनी योजना के अनुसार उसमें आग लगवा दी। पांडव विदुर की दूरदृष्टि से लाक्षागृह से जीवित बच निकले।

होली के आठ दिन पहले होलाष्टक लग जाता है। इस दिन होलिका-दहन करके बुराई पर अच्छाई की जीत दिखाई गई है। पौराणिक मान्यताओं के अनुसार बताया जाता है कि होलिका ने भगवान विष्णु के भक्त प्रहलाद को जलाने की कोशिश की। ईश्वर ने दंड दे दिया। वह स्वयं ही जल गई। होलिका-दहन के साथ होलाष्टक की समाप्ति और वसंतोत्सवारंभ। हर वर्ष की भाँति चैत्र नवरात्र भी शुरू हो जाएंगे। चैत्र नवरात्र के साथ ही हिन्दू नववर्ष का आरंभ हो जाएगा। इसी दिन गुड़ी पड़वा के पवित्र मास का भी आरंभ होगा। महाराष्ट्र में गुड़ी पड़वा का त्योहार धूमधाम से मनाया जाता है।

चौत्र अमावस्या, इस दिन हिन्दू नववर्ष का आरंभ माना जाता है। यानी विक्रम संवत 2080 का शुभारंभ। चौत्र मास की अष्टमी तिथि को दुर्गाष्टमी है। इस दिन कन्याओं को भोजन कराते हैं और उसे दान देते हैं। इस दिन माँ दुर्गा के 8वें रूप यानि महागौरी की पूजा की जाती है। नौ दिनों तक चलने वाले नवरात्रि की पूजा की शुरुआत ....तक चलेगी। नवरात्रों के नौ दिन आस्था और भक्ति के साथ भगवती की साधना के भी दिन माने जाते हैं। शास्त्रों की मान्यता है कि देवी इन नौ दिनों में पृथ्वी पर आकर अपने भक्तों को मनवांछित फल देती है। नवरात्रि के नौ दिनों में महादुर्गा के नौ स्वरूपों - शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चन्द्रघण्टा, कूष्माण्डा, स्कंधमाता, कात्यायानी, कालरात्रि, महागौरी और सिद्धिदात्री आदि माता की पूजा-अर्चना की जाती है। इसके बाद अगले ही दिन होता है रामनवमी का त्योहार । इस दिन भगवान राम का जन्म हुआ था। इस दिन लोग अयोध्या में जाकर सरयू नदी में स्नान करते हैं। अयोध्या में चौत्र माह में भव्य मेले का आयोजन किया जाता है। शुक्ल पक्ष की एकादशी को आमलकी एकादशी आती है। आंवले के पेड़ की पूजा होती है।

मार्च महीना जयंती महीना है। चौतन्य जयंती, तुकाराम जयंती, छत्रपति शिवाजी महाराज जयंती, डा. हेडगेवार जयंती आदि जब इन महापुरुषों को याद किया जाता है। इसी माह कई दिवस पूरे विश्व में मनाये जाते हैं, इनमें महत्वपूर्ण हैं-विश्व महिला दिवस और विश्व मौसम दिवस। आज महिलाऐं हर क्षेत्र में अपनी शानदार उपस्थिति के साथ चाहे वह तकनीकी क्षेत्र हो या प्रबंधन का, चिकित्सा क्षेत्र हो या अभियांत्रिकी का, प्रत्येक क्षेत्र में अपनी विशेषज्ञता प्रामाणित कर रहीं हैं। वह आकाश में उड़ रही है। वे चल नहीं रहीं दौड़ रही हैं। इस दौड़ में वे बहुत कुछ हासिल कर रही हैं। तो क्षमा कीजिए बहुत कुछ पीछे भी छूट रहा है। आज उनका बच्चा माँ की गोद में नहीं वह तो 'धाय' और 'आया' की खरीदी हुई गोद में 'घर' या 'क्रेच' में पल रहा है। नौकर-'आया' से वह कैसे संस्कार पा रहा है? सोचिएगा जरूर।

23 मार्च विश्व मौसम दिवस है। आज सबके मन में पर्यावरण को लेकर एक खौफ तो है ही लेकिन पर्यावरण स्वच्छता के लिए अपने कर्त्तव्य से नितांत विमुख हैं। आज फैक्टरी के कूड़े से हमारी नदियां प्रदूषित और मैली होती जा रहीं हैं। हवा हानिकारक रसायनों से भरी है।ओजोन की परत में छेद से होकर आने वाली सूर्य की किरणें खतरनाक हो रही हैं। इसके जिम्मेदार कौन हैं? हमारी भौतिक लिप्सा। जो पेड़ हमें प्राणवायु देते हैं, हमें जीवन देते हैं उन्हीं को काट-काटकर हम उनका जीवन हर लेते हैं। आइए सारे संसार में पर्यावरण-रक्षण की चेतना जगाएं। पर्यावरण की रक्षा और संवर्द्धन, उसका पोषण और पुष्टि, उसकी शुद्धि और पवित्रता का न केवल संदेश दें वरन् उसे व्यवहार द्वारा अपने आचरण द्वारा दिखाएं आप अपने लिए ही पर्यावरण की रक्षा कीजिए। पर्यावरण सुरक्षित तो आप और हम भी सुरक्षित हैं।

-डॉ. शकुंतला कालरा

भारतीय संस्कृति में होली के विभिन्न रंग

कृष्ण कुमार यादव
पोस्टमास्टर जनरल, वाराणसी परिक्षेत्र, वाराणसी, उ.प्र.

होली भारतीय समाज का एक प्रमुख त्यौहार है, जिसका लोग बेसब्री के साथ इंतजार करते हैं। भारत के विभिन्न क्षेत्रों में अलग–अलग रूपों में होली मनाई जाती है। होली के रंग हमें प्रकृति से जोड़ते हैं। वसंत की फगुनाई के बीच घनी भूरी टहनियों पर हरे पत्तों के बीच चटक नांरगी रंग के टेसू के फूल इस उल्लास को और भी बढ़ा देते हैं। आखिर होली के रंग बनाने की शुरुआत तो इन्हीं टेसू के फूलों से ही हुई है। यह होली के समय कहाँ से और कैसे आते हैं, कोई नहीं जानता है? पर हर होली के समय आकर ये एक खुशी जरुर दे जाते हैं। जीवन के उत्सवों की भाँति इनका आना–जाना होली के रंग को और भी चटक बना जाता है। रबी की फसल की कटाई के बाद वसन्त पर्व में मादकता के अनुभवों के बीच मनाया जाने वाला होली पर्व उत्साह और उल्लास का परिचायक है। अबीर–गुलाल व रंगों के बीच भांग की मस्ती में फगुआ गाते इस दिन क्या बूढ़े व क्या बच्चे, सब एक ही रंग में रंगे नजर आते हैं। भारतीय शास्त्रीय, उपशास्त्रीय, लोक तथा फिल्मी संगीत की परम्पराओं में होली का विशेष महत्व है।

होली की परम्परा काफी पुरानी है। प्राचीन चित्रों, भित्तिचित्रों और मंदिरों की दीवारों पर इस उत्सव के चित्र मिलते हैं। इसका वर्णन अनेक पुरातन धार्मिक पुस्तकों में भी मिलता है। इनमें प्रमुख हैं, जैमिनी के पूर्व मीमांसा–सूत्र और कथा गार्ह्य–सूत्र। नारद पुराण और भविष्य पुराण जैसे पुराणों की प्राचीन हस्तलिपियों और ग्रंथों में भी इस पर्व का उल्लेख मिलता है। विंध्य क्षेत्र के रामगढ़ स्थान पर स्थित ईसा से 300 वर्ष पुराने एक अभिलेख में भी इसका उल्लेख किया गया है। संस्कृत साहित्य में वसन्त ऋतु और वसन्तोत्सव अनेक कवियों के प्रिय विषय रहे हैं। मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य में दर्शित कृष्ण की लीलाओं में भी होली का विस्तृत वर्णन मिलता है। हिन्दू और मुस्लिम दोनों धर्मों में होली मनाये जाने के वृहद् उल्लेख मिलते हैं। सुप्रसिद्ध पर्यटक अलबरूनी ने भी अपने ऐतिहासिक यात्रा संस्मरण में होलिकोत्सव का

वर्णन किया है। मुगल काल में भी होली खूब मनाई जाती थी। अकबर का जोधाबाई के साथ तथा जहाँगीर का नूरजहाँ के साथ होली खेलने का वर्णन खूब मिलता है। शाहजहाँ के जमाने में होली को **ईद–ए–गुलाबी या आब–ए–पाशी** (रंगों की बौछार) कहा जाता था।

होली मनाने के पीछे भी कई कथाओं का जिक्र आता है। नारद पुराण के अनुसार दैत्य राज हिरण्यकश्यप को यह घमंड था कि उससे सर्वश्रेष्ठ दुनिया में कोई नहीं, अतः लोगों को ईश्वर की पूजा करने की बजाय उसकी पूजा करनी चाहिए। पर उसका बेटा प्रहलाद जो कि विष्णु भक्त था, ने हिरण्यकश्यप की इच्छा के विरूद्ध ईश्वर की पूजा जारी रखी। हिरण्यकश्यप ने प्रहलाद को प्रताड़ित करने हेतु कभी उसे ऊंचे पहाड़ों से गिरवा दिया, कभी जंगली जानवरों से भरे वन में अकेला छोड़ दिया पर प्रहलाद की ईश्वरीय आस्था टस से मस न हुयी और हर बार वह ईश्वर की कृपा से सुरक्षित बच निकला। अंततः हिरण्यकश्यप ने अपनी बहन होलिका जिसके पास एक जादुई चुनरी थी, जिसे ओढ़ने के बाद अग्नि में भस्म न होने का वरदान प्राप्त था, की गोद में प्रहलाद को चिता में बिठा दिया ताकि प्रहलाद भस्म हो जाय। पर होनी को कुछ और ही मंजूर था, ईश्वरीय वरदान के गलत प्रयोग के चलते जादुई चुनरी ने उड़कर प्रहलाद को ढक लिया और होलिका जल कर राख हो गयी और प्रहलाद एक बार फिर ईश्वरीय कृपा से सकुशल बच निकला। दुष्ट होलिका की मृत्यु से प्रसन्न नगरवासियों ने उसकी राख को उड़ा–उड़ा कर खुशी का इजहार किया। मान्यता है कि आधुनिक होलिकादहन और उसके बाद अबीर–गुलाल को उड़ाकर खेले जाने वाली होली इसी पौराणिक घटना का स्मृति प्रतीक है।

देश के विभिन्न अंचलों में होली मनाने की अपनी सांस्कृतिक और आध्यात्मिक परम्पराएं हैं। होली की रंगत बरसाने की लट्ठमार होली के बिना अधूरी ही कही जायेगी। कृष्ण–लीला भूमि होने के कारण फाल्गुन शुल्क नवमी को ब्रज में बरसाने की लट्ठमार होली का अपना अलग ही महत्व है। ब्रज में तो वसंत पंचमी के दिन ही मंदिरों में डांडा गाड़े जाने के साथ ही होली का शुभारंभ हो जाता है। बरसाना में हर साल फाल्गुन शुक्ल नवमी के दिन होने वाली लट्ठमार होली देखने व राधारानी के दर्शनों की एक झलक पाने के लिए यहाँ बड़ी संख्या में श्रद्धालु व पर्यटक देश–विदेश से खिंचे चले आते हैं। इस दिन नन्दगाँव के कृष्णसखा **'हुरिहारे'** बरसाने में होली खेलने आते हैं, जहाँ राधा की सखियाँ लाठियों से उनका स्वागत करती हैं। यहाँ होली खेलने वाले नंदगाँव के हुरियारों के हाथों में लाठियों की मार से बचने के लिए मजबूत ढाल होती है। परंपरागत वेशभूषा में सजे–धजे हुरियारों की कमर में अबीर–गुलाल की पोटलियाँ बंधी होती हैं तो दूसरी ओर बरसाना की हुरियारिनों के पास मोटे–मोटे तेल पिलाए लट्ठ होते हैं। बरसाना की रंगीली गली में पहुँचते ही हुरियारों पर चारां ओर से टेसू के फूलों से बने रंगों की बौछार होने लगती है। परंपरागत शास्त्रीय गान **'ढप बाजै रे लाल मतवारे को'** का गायन होने लगता है। हुरियारे **'फाग खेलन बरसाने आए हैं नटवर नंद किशोर'**, का गायन करते हैं तो हुरियारिनें **'होली खेलने आये श्याम आज जाकूं रंग में बोरै री'**, का गायन करती हैं। भीड़ के एक छोर से गोस्वामी समाज के लोग परंपरागत वाद्यों के साथ महौल को शास्त्रीय रुप देते हैं। ढप, ढोल, मृदंग की ताल पर नाचते–गाते दोनों दलों में हंसी–ठिठोली होती है। हुरियारिनें अपनी पूरी ताकत से हुरियारों पर लाठियों के वार करती हैं तो हुरियार अपनी ढालों पर लाठियों की चोट सहते हैं। हुरियारे मजबूत ढालों से अपने शरीर की रक्षा करते हैं एवं चोट लगने पर वहाँ ब्रजरज लगा लेते हैं।

बरसाना की होली के दूसरे दिन फाल्गुन शुक्ल दशमी को सायंकाल ऐसी ही लट्ठमार होली नन्दगाँव में भी खेली जाती है। अन्तर मात्र इतना है कि इसमें नन्दगाँव की नारियाँ बरसाने के पुरूषों का लाठियों से सत्कार करती हैं। इसमें बरसाना के हुरियार नंदगाँव की हुरियारिनों से होली खेलने नंदगाँव पहुँचते हैं। फाल्गुन की नवमी व दशमी के दिन बरसाना व नंदगाँव के लट्ठमार आयोजनों के पश्चात होली का आकर्षण वृंदावन के मंदिरों की ओर हो जाता है, जहाँ रंगभरी एकादशी के दिन पूरे वृंदावन में हाथी पर बिठा राधावल्लभ लाल मंदिर से भगवान के स्वरुपों की सवारी निकाली जाती है। बाद में भी ठाकुर के स्वरूप पर गुलाल और केशर के छींटे डाले जाते हैं। ब्रज की होली की एक और विशेषता यह है कि धूलैड़ी मना लेने के साथ ही जहाँ देश भर में होली का खूमार टूट जाता है, वहीं ब्रज में इसके चरम पर पहुँचने की शुरुआत होती है।

यदि मथुरा की होली कृष्ण–राधा के बिना अधूरी है तो वाराणसी की होली भी शिव–पार्वती के बिना अधूरी है। काशी की होली की सबसे खास बात यह है कि यहां होली एक–दो दिन नहीं बल्कि सप्ताह भर मनायी जाती है। बाबा विश्वनाथ के विशिष्ट

श्रृंगार के बीच भक्त भांग व बूटी का आनंद लेते हैं। वाराणसी में होली की शुरूआत रंग भरी एकादशी से होती है। ऐसी मान्यता है कि रंग भरी एकादशी के दिन बाबा विश्वनाथ माता पार्वती और पुत्र गणेश के साथ गौना करा कर काशी लौटते हैं। उनके काशी लौटने पर तीन लोकों के लोग उनका स्वागत करते हैं। इस दिन बाबा विश्वनाथ के साथ काशी के लोग रंग-गुलाल खेलते हैं। काशी विश्वनाथ मंदिर के साथ शहर की गली-गली में मौजूद मंदिर रंग-गुलाल से नहा उठते हैं। काशी की होली में एक अलग प्रकार का हुड़दंग और अल्हड़पन दिखाई पड़ता है। परम्परागत फगुआ काशी की गलियों को खूब गुलजार करता है, जब जोगीरा सा रा रा रा रा ...की हुंकार भरते और नाचते हुए युवाओं की टोली यहाँ रंग खेलती है। घाटों पर होनी वाली अद्भुत और अनोखी होली में देश-विदेश के पर्यटक भी खूब शामिल होते हैं। रंग भरी एकादशी के दूसरे दिन महाश्मशान में भगवान शिव अपने भक्तों के साथ भस्म से अनूठी होली खेलते हैं। इन भक्तों में उनके भूत-पिशाच गण और दृश्य-अदृश्य आत्माएं मौजूद होती हैं। यह भस्म कोई साधारण भस्म नहीं होती बल्कि इंसान के शव दहन के बाद पैदा होने वाली राख होती है। तभी तो कहते हैं कि काशी में जन्म और मृत्यु दोनों ही उत्सव हैं। होली के बाद आने वाले मंगलवार को यहाँ बुढ़वा मंगल खास तौर से मनाया जाता है। होली युवाओं के जोश का त्यौहार है तो बुढ़वा मंगल में काशी के बुजुर्ग लोगों का उत्साह भी दिखाई पड़ता है। काशी की होली में जब सुबह-ए-बनारस और फागुन का रंग मिलता है तो उसकी छटा निराली होती है।

कानपुर में होली का अपना अलग ही इतिहास है। यहाँ अवस्थित जाजमऊ और उससे लगे बारह गाँवों में पाँच दिन बाद होली खेली जाती है। बताया जाता है कि कुतुबुद्दीन ऐबक की हुकुमत के दौरान ईरान के शहर जंजान के शहर काजी सिराजुद्दीन के शिष्यों के जाजमऊ पहुँचने पर तत्कालीन राजा ने उन्हें जाजमऊ छोड़ने का हुक्म दिया तो दोनो पक्षों में जंग आरम्भ हो गई। इसी जंग के बीच राजा जाज का किला पलट गया और किले के लोग मारे गये। संयोग से उस दिन होली थी पर इस दुखद घटना के चलते नगरवासियों ने निर्णय लिया कि वे पाँचवें दिन होली खेलेंगे, तभी से यहाँ होली के पाँचवें दिन पंचमी का मेला लगता है। इसी प्रकार वर्ष 1923 के दौरान होली मेले के आयोजन को लेकर कानपुर के हटिया में चन्द बुद्धिजीवियों व्यापारियों और साहित्यकारों (गुलाबचन्द्र सेठ, जागेश्वर त्रिवेदी, पं. मुंशीराम शर्मा 'सोम', रघुबर दयाल, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', श्याम लाल गुप्त 'पार्षद', बुद्धूलाल मेहरोत्रा और हामिद खाँ) की एक बैठक हो रही थी। तभी पुलिस ने इन आठों लोगों को हुकूमत के खिलाफ साजिश रचने के आरोप में गिरफ़तार करके सरसैया घाट स्थित जिला कारागार में बन्द कर दिया। इनकी गिरफ्तारी का कानपुर की जनता ने भरपूर विरोध किया। आठ दिनों पश्चात् जब उन्हें रिहा किया गया, तो उस समय 'अनुराधा-नक्षत्र' लगा हुआ था। जैसे ही इनके रिहा होने की खबर लोगों तक पहुँची, लोग कारागार के फाटक पर पहुँच गये। उस दिन वहीं पर मारे खुशी के पवित्र गंगा जल में स्नान करके अबीर-गुलाल और रंगों की होली खेली। देखते ही देखते गंगा तट पर मेला सा लग गया। तभी से परम्परा है कि होली से अनुराधा नक्षत्र तक कानपुर में होली की मस्ती छायी रहती है और आठवें दिन प्रतिवर्ष गंगा तट पर गंगा मेले का आयोजन किया जाता है।

होली के पर्व की तरह इसकी परंपराएँ भी अत्यंत प्राचीन हैं और इसका स्वरूप और उद्देश्य समय के साथ बदलता रहा है। उत्तर पूर्व भारत में होलिकादहन को भगवान कृष्ण द्वारा राक्षसी पूतना के वध दिवस से जोड़कर पूतना दहन के रूप में मनाया जाता है तो दक्षिण भारत में मान्यता है कि इसी दिन भगवान शिव ने कामदेव को तीसरा नेत्र खोल भस्म कर दिया था और उनकी राख को अपने शरीर पर मल कर नृत्य किया था। तत्पश्चात कामदेव की पत्नी रति के दुख से द्रवित होकर भगवान शिव ने कामदेव को पुनर्जीवित कर दिया, जिससे प्रसन्न हो देवताओं ने रंगों की वर्षा की। इसी कारण होली की पूर्व संध्या पर दक्षिण भारत में अग्नि प्रज्वलित कर उसमें गन्ना, आम की बौर और चन्दन डाला जाता है। यहाँ गन्ना कामदेव के धनुष, आम की बौर कामदेव के बाण, प्रज्वलित अग्नि शिव द्वारा कामदेव का दहन एवं चन्दन की आहुति कामदेव को आग से हुई जलन हेतु शांत करने का प्रतीक है। मध्यप्रदेश के मंदसौर जिले में अवस्थित धूंधड़का गाँव में होली तो बिना रंगों के खेली जाती है और होलिकादहन के दूसरे दिन ग्रामवासी अमल कंसूबा (अफीम का पानी) को प्रसाद रूप में ग्रहण करते हैं और सभी ग्रामीण मिलकर उन घरों में जाते हैं जहाँ बीते वर्ष में परिवार के किसी सदस्य की मृत्यु हो चुकी होती है। उस परिवार को सांत्वना देने के साथ होली की खुशी में शामिल किया जाता है।

होली सिर्फ एक त्यौहार भर नहीं है बल्कि यह हमारी संस्कृति और अध्यात्म का भी अभिन्न अंग बन चुका है। भारतीय उत्सवों को लोकरस और लोकानंद का मेल कहा गया है। लोकसंगीत, नृत्य, नाट्य, लोककथाओं, किस्से-कहानियों और यहाँ तक कि मुहावरों में भी होली के पीछे छिपे संस्कारों, मान्यताओं व दिलचस्प पहलुओं की झलक मिलती है। होली पर खेले गए रंग गन्दगी के नहीं बल्कि इस विचार के प्रतीक हैं कि इन रंगों के धुलने के साथ-साथ व्यक्ति अपने राग-द्वेष भी धुल दे। सही रूप में देखें तो होली के माध्यम से जीवन में व्याप्त निराशाजनक विचारों से मुक्त होकर नए आशावादी विचारों के साथ उल्लासपूर्वक जीवन का आरंभ संभव है। रंगों का यह त्योहार यह सन्देश भी देता है कि इंसानियत का रंग एक ही है। हंसी खुशी, उल्लास का रंग एक है।

होली की कुंडलिया

प्रो. डॉ. शरद नारायण खरे
प्राचार्य
शासकीय जे.एम.सी. महिला महाविद्यालय
मंडला (म.प्र.)

होली का उल्लास है, मन ले रहा उड़ान
हर पल को तो मिल गई, इक नेहिल पहचान
इक नेहिल पहचान,खिली है मन की बगिया
गाते रंग-गुलाल, हो गई है नव दुनिया
होकर सब रंगीन, कर रहे हँसी-ठिठोली
बुड्ढे बने जवान, अनोखी सचमुच होली।

होली का यह पर्व जो, करता बहुत कमाल
सभी ओर बिखरी यहाँ, भावों भरी गुलाल
भावों भरी गुलाल, बन गये नैन कटारी
घायल हुए जवान, मुहब्बत है बीमारी
कुछ करते उत्पात, किसी की मीठी बोली
रौनक का संसार, सुहानी लगती होली।

होली बृज में हो रही, भीगे राधा-श्याम
अपनेपन का बन गया, अंतर पावन धाम
अंतर पावन धाम, रँगी है सारी काया
भीतर का अनुराग, प्रणय की है यह माया
बरसाने की बात, वहाँ मस्तों की टोली
धींगामुश्ती खूब, आज इतराती होली।

होली का त्योहार तो, परे करे अवसाद
सूने दिल को जो करे, इक पल में आबाद
इक पल में आबाद, दिलों को नाच नचाए
हो मादक हर बात, बहुत ही धूम मचाए
हुरियारों का जोश, छोड़ दो तुम अब खोली
बाहर रक्खो पैर, बुलाती तुमको होली।

होली की महिमा बहुत, गाते रंग-अबीर
फागुन में आती सदा, हरने सबकी पीर
हरने सबकी पीर, गली, सड़कों पर मस्ती
मिलें साल भर बाद, बहुत रंगों की हस्ती
करो खूब हुड़दंग, खोजकर निज हमजोली
है नेहिल अहसास, नाम जिसका है होली।

होली रंगरेली आयी रे

डॉ. विष्णुप्रसाद पाठक
लखनऊ, उत्तर प्रदेश

फूली सरसों की खेतों में अलिगन गुँजन मिश्री घोल
बौरे आमों के वृक्षों पर भौरें मंडरातें हैं दिल खोल।
झूमे मन मयूर चित चोर गूँजें कोयलियों की बोल,
विकसित कमलों के तडाग में पारावत हैं तिरते डोल
प्रकृती में पराग कण बिखरे हम गुलाल बिखराई रे
होली रंगरेली आयी रे मस्ती गुलाल की छायी रे।।

बागों में चहकें पक्षीगण सुरभित डाली डाली वन रे
मधुमयपुष्पों से वासित सभी खेतखलिहान बाग रे
रंगों के बहार में रंजित गाँव शहर के सब गलियारे
होली के रंगों से धुल गये जनमन के वे कालिख सारे
होली में तमा जली सारी लाली प्रकाश की छायी रे
होली रंगरेली आयी रे मस्ती गुलाल की छायी रे।।

पिचकारी में रंग भरो सुजनों स्नेहानुराग रंगने वाली
होली खेलें सब मिल करकेअब प्रेमभाव भरने वाली
सबका हित सबका विकास चिंतनधारा बहने वाली
सतरंगी गुणों के रंगों से मन अनुरंजित करने वाली
मत्सर मद मोह जले सारे समता ममता हर्षायी रे
होली रंगरेली आयी रे मस्ती गुलाल की छायी रे।।

अनुरागरंग डालो सबको सम्मोहन मोहन सा कर दो
रंग दो रंगों से जनजन को रागों का नवपराग भर दो
जनमानस उजियारा करके द्वेषों के अँधियारे दर दो
सुखसुरभित अबीर कणों से लोकांचल पूरित कर दो
आओ सब मिलकर गले मिलें हरिगुण लीला गायी रे
होली की कबीरा सरा रारा गाकर आनंद मनायी रे।
होली रंगरेली आयी रे मस्ती गुलाल की छायी रे।।

डॉ.मेहता नगेन्द्र सिंह
भू–वैज्ञानिक,पर्यावरणविद्
एवं हिन्दी रचनाकार,पटना

स्थायी स्तम्भ

पर्यावरण चिन्तन

विगत वर्ष 1972 के 5 जून को विश्व के अधिकतर देशों का मन पर्यावरण के दयनीय स्थिति से चिन्तित हो उठा। स्वीटजरलैंड के स्टॉकहोम में पृथ्वी शिखर सम्मेलन का आयोजन आहूत किया गया। विश्व के 148 देशों के प्रतिनिधियों ने मिलकर इस चिन्ता को एक गम्भीर वैश्विक समस्या के रूप में रेखांकित किया। तभी से प्रत्येक वर्ष 5 जून को वैश्विक स्तर पर 'विश्व पर्यावरण– दिवस' मनाने का प्रचलन बना। बीस साल बाद ब्राजील के 'रियो डी जनेरियो' में पुनः इस मुद्दे पर शिखर सम्मेलन आहूत हुआ। वैश्विक तापन और जलवायु परिवर्तन के मसले पर गम्भीर वार्ता हुई। उसी समय से अपना देश भारत ने भी इसे आत्मसात किया। कई योजनाएँ बनी, काम हो रहा है, मगर कछुए की चाल से। पूर्व में पर्यावरण एक वैज्ञानिक विषय रहा, लेकिन अब यह जनसामान्य का विषय बन गया है।इसे ठीक से समझने के लिए पर्यावरण शब्द को दो खण्ड यथा 'पर्य' और 'आवरण' में विग्रह कर देखें। पर्य का आशय चारों तरफ से है और आवरण का आशय मुख्य रूप से हरियाली का आच्छादन से है। वैसे वातावरण को ही पर्यावरण का पर्याय मान लिया गया है। लेकिन वर्तमान में पर्यावरण के साथ जोंक की तरह प्रदूषण चिपक गया है। इस क्रम में एक महत्वपूर्ण तथ्य की चर्चा आवश्यक होगा। समस्त विषयों के बीच पर्यावरण ही एकमात्र ऐसा विषय है, जो हमारे जीवन–अस्तित्व से सीधे जुड़ा हुआ है। इसका प्रभाव जीवन–यापन एवं रहन–सहन पर तत्क्षण और तत्कालिक होता है। इसलिये इसपर चिन्तन गहराई से होना चाहिये। हमारे पर्यावरण की अन्तर्वस्तु हमारे समस्त सतातन साहित्य से सरोबोर है। फिलहाल, संत कवि तुलसी के 'मानस' को उलटें, जिसमें बालि–वध के बाद प्रभु श्रीराम विलाप करती तारा से कहते हैं– 'क्षिति, जल, पावक, गगन, समीराः पंचतत्त्व रचित अति अधम शरीरा' यानि सौरमंडल के पाँच तत्त्वों के सम्मिश्रण से यह शरीर बना है। इन्हीं तत्त्वों में दो और यथा वनस्पति एवं मानवेतर प्राणियों को शामिल कर लिया जाता है तो पर्यावरण स्वतः परिभाषित हो जाता है। इस तरह पर्यावरण के मूल तत्त्व– पृथ्वी, जल, अग्नि,आकाश, वायु, वनस्पति एवं पशु–पक्षी आदि हो जाते हैं। वनस्पति पर्यावरण का प्राण है। जीवधारियों के लिये प्राणवायु का शुद्धिकरण प्राकृतिक संयत्र है। रोगी–व्याधियों के हित संकटमोचन औषधि है। जैसा कि ऊपर वर्णित है कि वनस्पति देवसदन है। वनस्पति हरीतिमा का स्रोत है। यही कारण है कि हमारी संस्कृति, खासकर अरण्य–संस्कृति में पूजनीय एवं वन्दनीय है।

पर्यावरण का वितान व्यक्तिवाचक से लेकर बहु अथवा समूहवाचक होते हुए विश्ववाचक क्षेत्र में व्याप्त रहता है। यहाँ वितान का आशय फैलाव और प्रभाव से है। एक विशेष व्यक्ति के लिए उसका पर्यावरण का प्रभाव क्षेत्र क्या है, क्या हो सकता है। थोड़ा इसपर विचार लें। एक व्यक्ति खड़ा होकर जितनी दूर तक देख सकता, जितनी दूर पर घटिक घटना से प्रभावित हो सकता है, जितनी दूर रखी अतिगर्म अथवा अतिशीत वस्तु यानि आग और वर्फ से प्रभावित हो सकता है आदि वह क्षेत्र उस खड़ा व्यक्ति का कहलायेगा। इसी तरह यदि व्यक्ति जमीन से जैसे– जैसे ऊपर जायेगा, वैसे–वैसे उसका यह पर्यावरणीय वितान बढ़ जाता है। समतलीय वितान में घर, मुहल्ला, गाँव/शहर, प्रखंड, जनपद, प्रमंडल राज्य, राष्ट्र और अन्त में विश्व के सभी समूह पर्यावरण की परिधि में सम्मलित होते जायेंगे। यही कारण है कि जब भी पर्यावरण प्रभावित होता है तो प्रभावित सभी होते हैं। पर्यावरण सबके लिये है।

क्रमशः ...

अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस (8 मार्च) पर विशेष

समकालीन परिवेश में नारी विमर्श

आकांक्षा यादव
पोस्टमास्टर जनरल आवास,
कैण्ट प्रधान डाकघर, नदेसर,वाराणसी

नारी विमर्श, नारीवाद, नारी अस्मिता, नारी स्वातंर्त्य, नारी सशक्तिकरण जैसे तमाम विषय आज पूरी दुनिया में गंभीर बहस का विषय हैं। इन पर अकादमिक से लेकर राजनैतिक स्तर तक और घरेलू से लेकर सामाजिक और आर्थिक स्तर तक बहसें हो रही हैं। औपचारिक से लेकर अनौपचारिक स्तर तक चल रही इस पहल ने नारी के भीतर एक नई शक्ति और संभावनाओं के नए युग की शुरुआत की है। इसने जहाँ नारी के भीतर अधिकारों की लौ जलाई है, वहीं उन्हें अपने अधिकारों के लिए सतत संघर्ष करना भी सिखाया है। कभी अरस्तू ने कहा था, **"स्त्रियाँ कुछ निश्चित गुणों के अभाव के कारण स्त्रियाँ हैं"** तो संत थॉमस ने स्त्रियों को **"अपूर्ण पुरूष"** की संज्ञा दी थी, पर वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ऐसे तमाम सतही सिद्धान्तों का कोई अर्थ नहीं रह गया एवं नारी अपनी जीवटता के दम पर नए आयाम गढ़ रही है। नारी आज न सिर्फ सशक्त हो रही है, बल्कि लोगों को भी सशक्त बना रही है।

वैश्विक स्तर पर देखें तो नारी विमर्श का उदय पश्चिम में हुआ माना जाता है। पाश्चात्य दार्शनिक और विचारक एच.टी मिल तथा जे.एस.मिल ने सर्वप्रथम निबंधों की एक सीरीज प्रकाशित की जिसमें कहा गया कि स्त्रियोचित तथा पुरूषोचित गुणों का विकास सामाजिक परिवेश पर निर्भर करता है। वास्तव में स्त्रियों की सामाजिक पराधीनता को समाप्त करना आज के दौर में सबसे आवश्यक है। उन्हें सामाजिक और आर्थिक अवसर तथा शिक्षा उपलब्ध कराना ही सही अर्थों में न्याय दिलाने में उपयोगी साबित होगा। कालांतर में नारी विमर्श ने मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित होकर सामाजिकता के साथ–साथ आर्थिक स्वतंत्रता को भी दर्शाया। उसके बाद उग्र नारीवाद आया। इसमें यह कहा गया कि पुरुष द्वारा स्त्री का शोषण सर्वत्र और हर समाज में होता है। वहीं प्रसिद्ध समाजशास्त्री सिमोन द बोउआर ने कहा कि, **"स्वाभाविक तौर पर स्त्री पैदा नहीं होती बल्कि उसमें लिंगभेद की चेतना पैदाकर उसके स्त्री होने का अहसास कराया जाता है। स्त्री–पुरुष समता में शरीर न तो बाधक है न बंधक। समाज की मनोवृत्ति में बदलाव किये बिना विमर्श के लाभ को पूरी तरह प्राप्त करना संभव नहीं है।"**

नारियों को अपनी पहचान बनाने लिए काफी संघर्ष करना पड़ा। 1900 के आरंभ में **'अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस'** मनाने की शुरूआत हुई थी। वर्ष 1908 में न्यूयार्क की एक कपड़ा मिल में काम करने वाली करीब 15 हजार महिलाओं ने काम के घंटे कम करने, बेहतर वेतन और वोट का अधिकार देने के लिए प्रदर्शन किया था। इसी क्रम में 1909 में अमेरिका की ही सोशलिस्ट पार्टी ने पहली बार नेशनल वुमन-डे मनाया था। वर्ष 1910 में डेनमार्क के कोपेनहेगन में कामकाजी महिलाओं की अंतर्राष्ट्रीय कॉन्फ्रेंस हुई जिसमें अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर महिला दिवस मनाने का फैसला किया गया और 1911 में पहली बार 19 मार्च को अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस मनाया गया। उस समय इसका प्रमुख ध्येय महिलाओं को वोट देने का अधिकार दिलवाना था क्योंकि उस समय अधिकतर देशों में महिलाओं को वोट देने का अधिकार नहीं था। इसे सशक्तिकरण का रूप देने हेतु लाखों महिलाओं ने रैलियों में हिस्सा लिया। 1911 में ही महिलाओं के अधिकार के लिये लड़ने वाली नेन्सी एस्टर, ब्रिटिश संसद की पहली महिला सासंद बनीं। जैसे-जैसे महिलाएं मुखर होती गई, आंदोलनों दायरा भी बढ़ता गया। 1917 में रुस की महिलाओं ने, महिला दिवस पर रोटी और कपड़े के लिये हड़ताल पर जाने का फैसला किया। यह हड़ताल भी ऐतिहासिक थी। अंततः जार ने सत्ता छोड़ी और अन्तरिम सरकार ने महिलाओं को वोट देने के अधिकार दिये। उस समय रुस में जुलियन कैलेंडर चलता था और बाकी दुनिया में ग्रेगेरियन कैलेंडर। इन दोनो की तारीखों में कुछ अन्तर है। जुलियन कैलेंडर के मुताबिक 1917 की फरवरी का अंतिम रविवार 23 फरवरी को था जबकि ग्रेगेरियन कैलैंडर के अनुसार उस दिन 8 मार्च था। इस समय पूरी दुनिया में (यहाँ तक कि रूस में भी) ग्रेगेरियन कैलैंडर चलता है। तब से विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं के प्रति सम्मान, प्रशंसा और प्यार प्रकट करते हुए 8 मार्च को महिलाओं के राजनीतिक, सामाजिक, और आर्थिक उपलब्धियों के उपलक्ष्य में महिला दिवस के रूप में मनाया जाता है।

यद्यपि नारी आंदोलन और विमर्श की जड़ें पाश्चात्य देशों में खोजी जाती हैं, पर भारत में भी आरंभ से ही इसके सूत्र मिलते हैं। भारतीय संस्कृति में नारी को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। वह शिव भी है और शक्ति भी, तभी तो भारतीय संस्कृति में सनातन काल से अर्धनारीश्वर की कल्पना सटीक बैठती है। शास्त्र से लेकर साहित्य तक नारी की महत्ता को स्वीकार किया गया है, **"यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते, रमन्ते तत्र देवता।"** सिंधु संस्कृति में भी मातृदेवी की पूजा का प्रचलन परिलक्षित होता है। नारी का कार्यक्षेत्र न केवल घर बल्कि सारा संसार है। प्रकृति ने वंश वृद्धि की जो जिम्मेदारी नारी को दे रखी है, वह न केवल एक दायित्व है अपितु एक चमत्कार और अलौकिक सुख भी है। इन सबके बीच नारी आरंभ से ही अपनी भूमिकाओं के प्रति सचेत रही है। **'नारीवाद' या 'फेमिनिज्म'** के रूप में नारी द्वारा अपने अधिकारों के लिए की जाने वाली लड़ाई सदियों पुरानी है। भारतीय संदर्भ में देखें तो हमारे वेद और ग्रंथ नारी शक्ति के योगदान से भरे पड़े हैं। विश्ववारा, अपाला, लोमशा, लोपामुद्रा तथा घोषा जैसी विदुषियों ने ऋग्वेद के अनेक सूक्तों की रचना करके और मैत्रेयी, गार्गी, अदिति इत्यादि विदुषियों ने अपने ज्ञान से तब के तत्वज्ञानी पुरूषों को कायल बना रखा था। नारी को आरंभ से ही सृजन, सम्मान और शक्ति का प्रतीक माना गया है। जब गार्गी याज्ञवल्क्य के साथ संवाद करती है, तो कहीं-न-कहीं वह नारी अस्मिता और इसके सशक्तिकरण की लड़ाई लड़ रही होती है। इसी प्रकार जब शकुंतला, दुष्यंत द्वारा न पहचाने जाने पर उन्हें भला-बुरा कहकर वहाँ से लौटने लगती है, तो वो भी वह अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ रही होती है। महाभारत काल में जब द्रौपदी भरी सभा में अपने अपमान पर वहाँ उपस्थित लोगों से धर्म का अर्थ पूछती है और अपने पतियों को धिक्कारती है, तो वहाँ भी एक तरह का नारीवाद है। नारी ने जब-जब आवाज उठाई उसकी आवाज को कुंद करने का प्रयास किया गया लेकिन उसका संघर्ष भी उतना ही पुराना है। पश्चिम में भले ही उसे 'नारीवाद' नाम मिल गया हो, लेकिन स्त्री की अपनी अस्मिता, अस्तित्व और अधिकारों की ये लड़ाई प्रायः हर देश-काल में मौजूद थी और सदियों पुरानी है।

नारी मुक्ति आन्दोलन से नारी ही प्रथमतः जुड़ी, जिसकी अभिव्यक्ति उसके लेखों, नारों इत्यादि में दिखायी देती है। लिंगीय विभेद के प्रश्न को उठाने वाली प्रथम पाश्चात्य दार्शनिक चिन्तक सिमोन द बोउआर (The second sex -1949) थीं। अस्तित्ववादी विचारों की पोषक बोउआर ने स्त्रियों के विरूद्ध होने वाले अत्याचारों और अन्यायों का विश्लेषण करते हुए लिखा, "पुरूष ने स्वयं को विशुद्ध चित्त (Being-for- itself : स्वयं में सत्) के रूप में परिभाषित किया है और स्त्रियों की स्थिति का अवमूल्यन करते हुए उन्हें "अन्य" के रूप में परिभाषित किया है व इस प्रकार स्त्रियों को "वस्तु" रूप में निरूपित किया गया है। बोउआर का मानना था कि स्वयं स्त्रियों ने भी इस स्थिति को स्वीकार कर लिया। 19वीं सदी की महान नारीवादी ब्रिटिश लेखिका वर्जीनिया वुल्फ की 'ए रूम ऑफ वन्स ओन' से लेकर तस्लीमा नसरीन की 'औरत के हक में', हिंदी लेखिका मैत्रेयी पुष्पा की 'आज की नारी' और प्रभा खेतान की 'बाजार के बीच, बाजार के खिलाफ' जैसी तमाम पुस्तकें नारी विमर्श को बढ़ावा देती हैं। वृंदा करात की 'भारतीय नारी संघर्ष और मुक्ति', इतालवी पत्रकार और लेखिका ओरियाना फेलेसी की 'एक खत अजन्मे बच्चे के नाम', तथा जेस्मिन लोरेंस की 'महिला श्रमिक : सामाजिक स्थिति एवं समस्याएं', ऐलिन मोर्गन की 'नारी का अवतरण' जैसी तमाम पुस्तकें स्त्री समाज के विभिन्न आयामों को उनके परिवेश के साथ प्रतिबिंबित करती हैं और उनका विश्लेषण करती नजर आती हैं। व्यापक सरोकार को समेटे इन तमाम कृतियों के केंद्र में स्त्री का संघर्ष और अस्मिता है। ये न तो नारेबाजी में उतरती हैं, न किसी हवालोक में जाकर कोई आदर्शवादी चित्र प्रस्तुत करने की राह पकड़ती हैं। उनके पास खुद के भोगे गए यथार्थ अनुभव और अपने परिवेश की घटनाओं की पूंजी है, जिससे नारी विमर्श आकार लेता है।

नारीवादी विमर्श किसी एक कालखण्ड से बंधा हुआ नहीं है बल्कि यह वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अतीत का विश्लेषण करता है। भारतीय सभ्यता-संस्कृति में भी यह स्त्री की ऐतिहासिक अवस्थिति

को पहचानने की कोशिश करता है। स्त्री की पीड़ा यह है कि उसे अपनी बात कहने का हक ही नहीं दिया गया। जब स्त्री ने कुछ कहने की सोची तो उसे उसके दायरे में कैद कर दिया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि स्त्री की रचनात्मकता और वैचारिकता का प्रस्फुटन ही उसकी मानसिक पीड़ा और समस्या बन गई। इससे स्त्री के अंदर का छुपा सच समाज के सामने नहीं आ पाया। यह भी सोचने का विषय है कि जहाँ एक ओर अभिव्यक्ति के लिए नारे लगाए जाते हों वही दूसरी ओर स्त्री को अपनी बात भी कहने का अधिकार न हो। स्त्री की वेदना का अनुभव संसार कितना बड़ा है, लेकिन हमेशा उसे सामाजिक पटल पर आने से रोका जाता रहा। भारतीय संस्कृति में एक ओर स्त्री को देवी मानने का आदर्श रहा है तो दूसरी ओर पुरूष प्रधान सत्ता के तहत स्त्री को अधीनस्थ बनाए रखने का यथार्थ भी। तभी तो डॉ. राम मनोहर लोहिया जैसे विचारक स्त्री को परतंत्र बनाने वाली विभिन्न शक्तियों और उनके आपसी संघात को देखते हैं और मानते हैं कि स्त्री की स्थिति जैविक रुप से एक खास शारीरिक इकाई होने का ही प्रतिफल नहीं, बल्कि स्त्री की परतंत्रता, जाति, वर्ग, धर्म जैसे कारकों का भी प्रतिफल होती है। धर्म और संस्कृति के सहारे पितृसत्ता स्त्री के एक स्वतंत्रचेता व्यिक्तत्व होने की संभावनाओं को नष्ट करती रही है। अभी भी तमाम धार्मिक स्थलों पर नारी के प्रवेश को लेकर तमाम बंदिशें हैं। हिंदू समाज में उसी स्त्री को आदर्श माना गया जो मनसा–वाचा–कमर्णा पति की अनुगामिनी रही हो। निर्गुण रुप में वह स्त्री को देवी मानता है, सगुण में दासी। लोहिया कहते हैं कि पुरुष स्त्री को प्रतिभासंपन्न और बुद्धिमती भी बनाना चाहता है और उसे अपने कब्जे में भी रखना चाहता है। दूसरे शब्दों में कहें तो आज के दौर में पुरुष को ऐसी स्त्री चाहिए, जो अपने कौशल में तो अंग्रेज स्त्रियों की तरह हो, लेकिन भारतीय संस्कृति यानी पुरानी पितृसत्ता की संवाहक भी हो।

भूमंडलीकरण के बाद के प्रभावों, प्रतिफलों, सरोकारों और चिंताओं से नारी विमर्श भी अछूता नहीं रहा है। उपभोक्तावादी संस्कृति कई बार नारी कोएक आब्जेक्ट के रूप में पेश करती है, जिसे केवल उपभोग करना है, मानो उसकी कोई भावना ही नहीं। ऐसे में पाश्चात्य सभ्यता के समर्थक कुछ लोगों को नारी स्वतंत्रता का रास्ता दैहिक वर्जनाओं को तोड़ने और उन्मुक्तता में दिखा। महिलाओं को बाजार में उपभोक्ता वस्तुओं की बिक्री में लुभाने के अंदाज के कारण भी यह स्थिति उत्पन्न हुई। कई समकालीन विद्वान स्त्री की अस्मिता और स्वतंत्रता को उसकी यौन स्वतंत्रता की परिधि में ही सीमित रखने की रूढ़ि के शिकार हैं। समाज का एक बड़ा वर्ग अब स्वीकारता है कि स्त्री को "सेक्स" का पर्यायवाची बनाकर "यौन प्राणी" मात्र बना दिया गया अर्थात पुरूष को विषयी, निरपेक्ष व स्वायत्त रूप में एवं स्त्री को विषय, अन्य, सापेक्ष व पराधीन रूप में माना गया। इस प्रकार एक चेतन वर्ग द्वारा दूसरे चेतन वर्ग को अधीनता प्रदान की गयी और दूसरे वर्ग ने अपनी अधीनता स्वीकार कर ली। इस प्रकार स्त्री–पुरुष में एक द्वैत की स्थापना की गई है। एक विचारक के शब्दों में, "पुरुषों की नैतिकता महज सेक्स तक सीमित है लेकिन स्त्री की नैतिकता को उसके व्यवहार से जोड़ दिया गया है।" ऐसे में मॉरल–पुलिसिंग के नाम पर नैतिकता का समस्त ठीकरा महिलाओं के सिर पर थोप दिया जाता है। समय समय पर महिलाओं के वस्त्र–चयन को लेकर, शिक्षा, घूमने–फिरने इत्यादि को लेकर नियम बनाये जाते हैं। कई बार तो सुनने को भी मिलता है कि महिलाएं अपने पहनावे से ईव–टीजिंग को आमंत्रण देती हैं, मानो वे सेक्स ऑब्जेक्ट हों। इन दोनों छोरों के बीच नारी अपनी अस्मिता के लिए दोहरा संघर्ष करती है। आज नारी अपने अस्तित्व और अस्मिता दोनों के प्रति सजग हो रही है।

नारी अस्मिता एक व्यापक शब्द है, जिसमें वह एक तरफ तो घरेलू मोर्चे पर लड़ती है वहीं घर से बाहर भी उसे अपनी अस्मिता की लड़ाई लड़नी होती है। वस्तुतः उसका यथार्थ जीवन इतना कटु है कि उसके अपने सपने कब खत्म हो जाते हैं पता ही नहीं चलता। अपनी अस्मिता की तलाश भी वह कल्पना लोक में ही करती रहती है। तभी तो सिमोन द बोउआर ने कहा था, **"नारी का बड़बड़ाना भी उसका विरोध दर्ज करना है।"** यह अनायास ही नहीं है कि नारी स्वातंर्त्य के नाम पर चल रहे तमाम आंदोलनों और विमर्शों को कई बार परम्परागत मूल्यों के विपरीत बताते हुए अराजक तक कह दिया जाता है। नारी की प्रगतिशील प्रवृत्ति को भी कई बार स्वच्छंदता मान लिया जाता है या फिर स्वच्छंदता की आड़ में स्वतंत्रता पर बंधन लगाने की मानसिकता भी कार्य करती है। वस्तुतः स्वतंत्रता, स्वच्छंदता नहीं है बल्कि यह एक मर्यादा के भीतर अपने अधिकारों का सम्यक प्रयोग और कर्तव्यों का संतुलित निर्वहन है। नारी समाज का एक वर्ग ऐसा भी है जो अभी भी सिर से पाँव तक पूरे कपड़े पहने अपनी बौद्धिकता और जीवटता के दम पर समाज की रूढ़िगत वर्जनाओं को तोड़ने का साहस रखता है। वस्तुतः भूमंडलीकरण के दौर में नारी अपनी शिक्षा एवं सजगता के चलते जहाँ आत्मविश्वास हासिल कर रही है, वहीं घरेलू उत्पीड़न, उपभोग्यता और उपयोगिता से मुक्ति के साथ–साथ अपनी स्वतंत्र अस्मिता व अस्तित्व के प्रश्न को एक नये सिरे से उठा रही है। स्त्री के इतिहास और मिथक में चित्रित रूपों से, अतिरंजना की परत को हटाकर नारीवादी विमर्श उसके यथार्थ को प्रस्तुत करता है।

आज नारी जीवन के हर क्षेत्र में कदम बढ़ा रही है। वह अपने कर्तव्यों को गृहकार्यों की इतिश्री ही नहीं समझती है, बल्कि अपने सामाजिक दायित्वों के प्रति भी सजग है। वस्तुतः समाज की यह पारंपरिक सोच कि महिलाओं के जीवन का अधिकांश हिस्सा घर–परिवार के मध्य व्यतीत हो जाता है और बाहरी जीवन से संतुलन बनाने में उन्हें समस्या आएगी, बेहद दकियानूसी लगती है। आज एक महिला घर में अकेले जितना कार्य करती है, उसका मोल कोई नहीं समझता। पुरुष इसे महिला की ड्यूटी मानकर निश्चिन्त हो जाता है। यह उस स्थिति में भी है जबकि महिला भी कमा रही होती है। आज जरूरत इस बात की भी है कि जी.डी.पी. में महिलाओं के कार्य की गणना हो और घरेलू कार्यों को हवा में न उड़ाया जाय। इस अवधारणा को बदलने की जरुरत है कि बच्चों का लालन–पोषण और गृहस्थी चलाना सिर्फ नारी का काम है। यह एक पारस्परिक जिम्मेदारी है, जिसे पति–पत्नी दोनों को उठाना चाहिए। इस बदलाव का कारण महिलाओं में आई जागरूकता है, जिसके चलते वे अपने को दोयम नहीं मानतीं और कैरियर

के साथ-साथ पारिवारिक-सामाजिक परम्पराओं के क्षेत्र में भी बराबरी का हक चाहती हैं। अब वे स्वयं के प्रति सचेत होते हुए अपने अधिकारों के प्रति आवाज उठाने का माद्दा रखती हैं।

फेमिनिस्ट आन्दोलनों ने नगरीय जीवन में पली-बढ़ी महिलाओं पर तो प्रभाव डाला पर इधर जो एक नई प्रवृत्ति उजागर हुई है, वह है ग्रामीण अंचलों की अशिक्षित महिलाओं द्वारा रूढ़िवादी वर्जनाओं को तोड़कर नये प्रतिमान स्थापित करना। श्मशान में जाकर आग देने से लेकर महिलाएं वैदिक मंत्रोच्चारण के बीच पुरोहिती का कार्य करती हैं और विवाह के साथ-साथ शांति यज्ञ, गृह प्रवेश, मुंडन, नामकरण और यज्ञोपवीत भी करा रही हैं। राजनीति, प्रशासन, समाज, उद्योग, व्यवसाय, विज्ञान- प्रौद्योगिकी, फिल्म, संगीत, साहित्य, मीडिया, चिकित्सा, इंजीनियरिंग, वकालत, कला- संस्कृति, शिक्षा, आई. टी., खेल-कूद, सैन्य से लेकर अंतरिक्ष तक नारी ने छलांग लगाई है। नारी की नाजुक शारीरिक संरचना के कारण यह माना जाता रहा है कि वे सुरक्षा जैसे कार्यों का निर्वहन नहीं कर सकतीं। पर बदलते वक्त के साथ यह मिथक टूटा है। महिलाएं आज पुलिस, सेना, और अर्द्धसैनिक बलों में बेहतरीन तैनाती पा रही हैं। अब जागरूक नारी समाज की अवहेलना करना आसान नहीं रहा। आज वह स्वयं को सामाजिक पटल पर दृढ़ता से स्थापित करने को व्याकुल है। शर्मायी-सकुचायी सी खड़ी महिला अब रुढ़िवादिता के बंधनों को तोड़कर अपने अस्तित्व का आभास कराना चाहती है। महिलाओं को सम्पत्ति में बेटे के बराबर हक देने हेतु हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम में संशोधन, घरेलू महिला हिंसा अधिनियम, सार्वजनिक जगहों पर यौन उत्पीड़न के विरूद्ध नियम एवं लैंगिक भेदभाव के विरूद्ध उठती आवाज नारी को मुखर कर रही है। दहेज प्रथा, कन्या भ्रूण हत्या, बाल विवाह, शराबखोरी, लिंग विभेद जैसी तमाम बुराईयों के विरुद्ध नारी आगे आ रही है। ये सभी घटनाएं अधिकारों से वंचित नारी की उद्विग्नता को प्रतिबिंबित कर रही हैं।

वर्तमान समय में नारी अपनी सम्पूर्णता को पाने की राह पर निरंतर बढ़ रही है, ताकि समाज के नारी विषयक अधूरे ज्ञान को अपने आत्मविश्वास की लौ से प्रकाशित कर सके। नारी सृजन की प्रतीक है। हमारे यहाँ साहित्य और कला में नारी के कोमल रूप की कल्पना की गई है। कभी उसे कनक-कामिनी तो कभी अबला कहकर उसके रूपों को प्रकट किया गया है। पर आज की नारी इससे आगे है। वह न तो सिर्फ कनक-कामिनी है और न ही अबला, इससे परे वह दुष्टों की संहारिणी भी बनकर उभरी है। नारी की यौनिकता पर चोट करने वालों को नारियों ने करारा जवाब दिया है। वे नारी देह की बजाय उसके दिमाग पर जोर देती हैं। उनका मानना है कि दिमाग पर बात आते ही नारी पुरुष के समक्ष खड़ी दिखायी देती है, जो कि पुरुषों को बर्दाश्त नहीं। इसी कारण पुरुष नारी को सिर्फ देह तक सीमित रखकर उसे गुलाम बनाये रखना चाहता है। यहाँ पर अमृता प्रीतम की रचना 'दिल्ली की गलियाँ' याद आती है, जब कामिनी नासिर की पेंटिग देखने जाती है तो कहती है, **'तुमने वुमेन विद फ्लॉवर, वुमेन विद ब्यूटी या वुमेन विद मिरर को तो बड़ी खूबसूरती से बनाया पर वुमेन विद माइंड बनाने से क्यों रह गए।'** निश्चितत: यह कथ्य पुरुष वर्ग की उस मानसिकता को दर्शाता है जो नारी को सिर्फ भावों का पुंज समझता है, एक समग्र व्यक्तित्व नहीं। दरअसल नारी को 'मर्दवादी यौनिकता' से परे एक स्वतंत्र व समग्र व्यक्तित्व के रुप में देखने की जरुरत है। आज जरूरत है नारी जाति की उपलब्धियों को पितृसतात्मक समाज में स्वीकार किया जाना और उनकी उपलब्धियों की हर कीमत पर रक्षा करते हुए विस्तार।

नारी अस्मिता और विमर्श के नये आयामों, सवालों को नारी आन्दोलन और वैचारिक संघर्ष के केन्द्र में लाकर नारी अपनी नयी पहचान बना रही है। इसमें कोई शक नहीं कि नारी अस्मिता और सशक्तिकरण के संघर्ष को प्रभावी बनाने के लिए जरूरी है कि नारी अपना पक्ष खुलकर रखे, और एक स्वतंत्र व्यक्तित्व के रूप में अपनी स्थिति को जाने, उसे बदले और नये विकल्पों का निर्माण करे। नारी सशक्तिकरण के माध्यम से ही सामाजिक तानेबाने को और अधिक मजबूत किया जा सकता है। यह इक्कीसवीं सदी के बदलते समाज का जटिल यथार्थ है, जिसमें कोई फंतासी भरा नायक या प्रतिनायक नहीं बल्कि साधारण सी दिखने वाली तमाम नायिकाएं हैं जो मिलजुलकर अपने समय का आख्यान रच रही हैं।

भारत की बेटियाँ

डॉ. विद्यासागर मिश्र 'सागर'
सेवानिवृत्त प्रधानचार्य
लखनऊ, उत्तर प्रदेश

एक नहीं हैं अनेक जनमी वीरांगनाएं,
जिनका आजादी में असीम योगदान है।
रानी चेनम्मा, अवंतीबाई, झलकारी ऊदा,
जैसी नारियों का मिलता न उपमान है।
झांसी वाली रानी खूब लड़ी मरदानी बन,
वीरता में जिसकी अलग पहचान है।
रानी वेलु नचियार ने दिखाया शौर्य जब,
शत्रुओं ने भाग - भाग के बचाई जान है।।

अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस (8 मार्च) पर विशेष

वैदिक काल से वर्तमान तक का

महिलाओं का सफर

डॉ. अलका शर्मा
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
सह संपादक योग संस्कृति
उत्थान पीठ पत्रिका

अपने हौसलों से भरती नित नई उड़ान
न किसी से कोई शिकायत
न चेहरे पर थकान
नारी के हर रूप को सलाम

गृहस्थी रूपी गाड़ी को चलाने के लिए पति– पत्नी दो पहियों के समान माने जाते है। किसी भी परिवार की सफलता में जितना सहयोग पुरुष का होता जाता है उतना ही महिला होता है। यदि यह कहा जाए कि महिला पूरे परिवार की धुरी होती है, जिसके कारण सम्पूर्ण परिवार सुचारू रूप से चल पाता है तो इसमें तनिक भी अतिशयोक्ति नही होगी।

स्त्री के बिना घर की कल्पना करना भी दुष्कर है। इसका कारण है कि विधाता ने स्त्री को धरती जैसा धीरज दिया है, सहनशक्ति, धैर्य, त्याग, सूझ बूझ समर्पण प्यार, ममत्व, परिश्रम, बुद्धिमता आदि विलक्षण गुणों से परिपूर्ण बनाया है। इन्ही गुणों के कारण आज न केवल भारत मे बल्कि सम्पूर्ण विश्व मे महिलाएं अपने परिवार व करियर दोनों की जिम्मेदारियों का बखूबी निर्वहन कर रही है।

पारिवारिक, सामाजिक, राजनैतिक, स्तर पर उनकी कार्य शैली, क्षमता, पद– प्रतिष्ठा, उपलब्धियों के कारण उनकी प्रशंसा, करने उनको सम्मानित करने के उद्देश्य से, उनकी कठिनाइयों, अधिकारों की विवेचना करने हेतु 8 मार्च 1975 को अंतर राष्ट्रीय महिला दिवस मनाना सुनिश्चित किया गया था।

संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा स्वीकृति देने के बाद 8 मार्च 1977 को पहली बार अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस मनाया गया। अव विश्व के लगभग सभी देशों में बड़ी धूम धाम से मनाए जाने के कारण इसकी गूंज सुनाई पड़ती है। अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर मैं गर्व से कह सकती हूं कि विश्व की प्राचीनतम संस्कृति का वाहक कहे जाने वाले भारत बर्ष में वैदिक काल से लेकर वर्तमान तक स्त्रियो को सदैव ही सम्मान दिया जाता रहा है।

उल्लेखनीय बात यह है कि पश्चिमी देशों की तरह स्त्रियों को सम्मान देने के लिए कोई एक दिन निश्चित नही है। बल्कि हमारी संस्कृति में हर स्त्री के हर रूप को हर दिन ही सम्मान देने का आदर करने का विधान है चाहे वह माता हो, पत्नी, पुत्री, मित्र, रिश्ते की कोई भी महिला हो सभी सम्मान की पात्रा मानी जाती है भारतीय स्त्रियों की शिक्षा, उनके सामाजिक स्तर, उपलब्धियों का संक्षिप्त रूप में अवलोकन प्रस्तुत है।

वैदिक साहित्य में महिलाओं के काफी शिक्षित होने के प्रचुर प्रमाण मिलते है। तत्कालीन समाज मे स्त्रियो को काफी सम्मान प्रदान किया जाता था। स्त्रियों की स्थिति काफी सुदृढ़ थी। गार्गी, मैत्रेयी, ब्रह्मवादिनी, ममता, लोपा, घोषा, इंद्राणी, देवयानी आदि के परम विदुषी होने के प्रचुर उदाहरण मिलते है। वेदों और उपनिषदों में जिनके विषय मे स्पष्ट संकेत मिलते है मैं उन्ही का संक्षेप में उल्लेख करना चाहूंगी।

गार्गी : वैदिक साहित्य में गार्गी का नाम बहुत प्रसिद्ध है गर्ग वंशीय होने के कारण इनका नाम गार्गी पड़ा। 'वृहदारण्यक उपनिषद' में इनके शास्त्रार्थ करने का प्रसंग मिलता है। जिस प्रकार से श्री कृष्ण व अर्जुन के संवाद से गीता का जन्म हुआ। ठीक उसी प्रकार गार्गी व ऋषि याज्ञवल्क्य के प्रश्नोत्तर के कारण वृहदारण्यक उपनिषद का निर्माण हुआ। परम विदुषी ज्ञानी महिला होने के कारण वैदिक साहित्य में बहुत प्रसिद्ध है।

मैत्रेयी : मैत्रेयी परम ज्ञानी व अत्यंत शांत स्वभाव वाली, अध्ययनशील, चिंतक, शास्त्रार्थ में रुचि रखने वाली महिला थी। वे मित्र ऋषि की पुत्री, व याज्ञवल्क्य ऋषि की दूसरी पत्नी थी। याज्ञवल्क्य ऋषि ने जब आश्रम छोड़कर वानप्रस्थी होने का निश्चय किया, तो अपनी दोनों पत्नियों से सम्पति बंटवारा करने को कहा, इस पर कात्यानी ने उनकी संपत्ति का चयन किया परंतु मैत्रेयी के कहा– मैं नश्वर सम्पति लेकर क्या करूंगी। मैं भी आपके साथ वन में रहकर ज्ञान प्राप्त करना चाहती हूँ। यह कहकर धन का प्रस्ताव अस्वीकार करते हुए, पति के साथ वन जाकर ज्ञान प्राप्त कर अमरत्व प्राप्त करने का निश्चय किया। वृहदारण्यक उपनिषद में मैत्रेय और उनके पति के रोचक संवाद का उल्लेख किया गया है।

ब्रह्मवादिनी : ब्रह्मवादिनी ममता दीर्घतमा ऋषि की माता थी जो कि परम ज्ञानी व ब्रह्मज्ञान से सम्पन्न थी।

इसके अतिरिक्त विश्ववारा, लोप, घोषा, इंद्राणी देवयानी आदि महिलाओं का वेदों में उल्लेख मिलता है। ये सभी परम ज्ञानी थी। इससे स्पष्ट हो जैसा है कि वैदिक काल मे स्त्रियाँ सुशिक्षित थी समाज मे उनको बहुत सम्मान दिया जाता था।

उपनिषद काल मे भी पुरुषों के साथ स्त्रियों को भी शिक्षा का पूर्ण अधिकार था। रामायण काल में भी लव– कुश के साथ उसी आश्रम में 'आत्रेयी' का पढ़ना तत्कालीन समय मे सह शिक्षा की पुष्टि करने में सक्षम है। इसके अतिरिक्त पौराणिक ग्रंथों में स्त्रियों को सैन्य प्रशिक्षण व अत्यंत साहसी होने का वर्णन मिलता है।

मनुस्मृति में मनु ने :

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता ।

कहकर मानो समाज को नारी के सम्मान के लिए पूर्ण रूपेण निर्देश दिया। आजादी के बाद स्वतंत्र भारत की पहली गवर्नर सरोजनी नायडू बनी। जो महिलाओं की प्रगति का एक उत्कृष्ट उदाहरण बनी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद महिलाओं की स्थिति दिन प्रति दिन उन्नत होती गयी। आज महिलाएं डॉक्टर, इंजीनियर, न्यायधीश पर्वतरोहण, शिक्षक, अभिनेत्री जल, थल अभ की तीनो सेनाओं में उच्च पदों पर आसीन है। एक ओर अंतरिक्ष मे भी महिलाओं ने अपना परचम लहराया। आज विभिन्न खेलो में स्वर्णपदक जितने का भी हौसला रखने वाली महिलाएं देश की शान मानी जाती है।

सान्या नेहवाल, सान्या मिर्जा, सिंधु, रानी रामपाल, बछेंद्रीपाल, कल्पना चावला इसके प्रत्यक्ष प्रमाण है। जिन्होंने भारत का गौरव विश्व मे बढ़ाया है।

अभी कॅरोना जैसी महामारी के समय नारियां जहाँ अस्पतालों में डॉक्टर, नर्स, व अन्य स्टाफ के रूप में मोर्चा संभाल थी तो दूसरी ओर सामाजिक कर्ताओ के रूप में भी नारियो ने अदभुत काम किया। ऐसी विकट माहमारी के समय जहां स्कूल कॉलेज, ट्रैन, प्लेन, होटल रेस्टोरेंट जिम क्लब सब कुछ बंद था ऐसे में घर पर अपने परिवार के खान पान, पढ़ाई स्वस्थ का पूर्ण ध्यान रखते हुए देश की समस्त महिलाओं ने अपने कौशल व धैर्य का पूर्ण परिचय देकर सिद्धकर दिया कि महिलाएं किसी भी प्रकार से पुरुषों से कम नही है । इसी लिए कहा गया है–

गृहणीम गृहम उच्यते।

(घर गृहणी से ही होता है)

जिस समाज में स्त्री का सम्मान नहीं होता, उस समाज का शीघ्र पतन निश्चित है।

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई-पत्र
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस (8 मार्च) पर विशेष

सामाजिक विकास में महिलाओं का योगदान

भारत एक संपन्न परम्परा और सांस्कृतिक मूल्यों से समृद्ध देश है। यहां महिलाओं का सामाजिक स्थान सदैव सर्वोपरि एवं सम्मानजनक रहा है। भारतीय महिलाएं उर्जा से लबरेज, दूरदर्शिता से परिपूर्ण, जीवंत उत्साह और प्रतिबद्धता के साथ-साथ कठिन से कठिन चुनौतियों का सामना करने में सक्षम है। नोबेल पुरस्कार विजेता बंगला कवि रवीन्द्र टैगोर के अनुसार महिलाएं न केवल घर को रोशन करती हैं बल्कि अच्छे संस्कार एवं शिक्षा देकर अपनी सन्तानों के रूप में देश को आदर्श नागरिक भी देती हैं, जो देश के विकास में अपनी महती भूमिका अदा करते हैं। अनादि काल से ही महिलाएं समाज में प्रेरणा की स्रोत रही है साथ ही समाज में होने वाले सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक बदलाव में भी उन्होंने अपना भागीरथ योगदान दिया है। लैंगिक समानता और महिला सशक्तिकरण करना राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्यों में से एक प्रमुख लक्ष्य रहा है। वर्तमान में प्रबन्धन, पर्यावरण संरक्षण, समावेशी आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास में महिलाओं की भूमिका सर्वोपरि है।

श्रीमती सुषमा सागर मिश्रा
सेवानिवृत्त प्रधानाचार्या
राजकीय बालिका
विद्यालय, लखनऊ

महिलाओं से परिवार रूपी संस्था का सृजन होता है, परिवार से ही घर की संकल्पना साकार होती है एवं घरों से मिलकर समाज बनता है और समाज से देश बनता है अतः हम कह सकते हैं कि देश के विकास की नींव के निर्माण में महिला ही है जिसका योगदान समाज के विकास में सर्वोपरि है। महिला की क्षमता को नजरअंदाज करके सभ्य, शिक्षित और विकसित समाज के परिकल्पना बेइमानी है। सच कहें तो महिला सशक्तिकरण की बिना परिवार, समाज और देश का विकास संभव नहीं है। जब एक पुरुष शिक्षित होता है तो उसका लाभ केवल उसके परिवार को मिलता है परंतु जब एक महिला शिक्षित होती है तो उसमें एक पीढ़ी को शिक्षित करने की सामर्थ्य आ जाती है यहां तक कि उसमें पूरे समाज को बदलने की शक्ति समाहित हो जाती है।

हमारे देश में महिलाओं की स्थिति नहीं युगानुरुप परिवर्तन होते रहे हैं। वैदिक युग में महिलाओं की स्थिति सम्मानजनक, सुदृढ़ एवं विकास की पर्याय मानी जाती थी, उस समय की नारी नैतिकता, चारित्रिक सौष्ठव, निष्ठा, उज्जवल आचरण एवं सुसंस्कृतता की प्रतिमूर्ति के रूप में स्थापित थी। विदुषी गार्गी, अपाला, विद्योत्तमा आदि आज भी अपनी विद्वत्ता के लिए जानी जाती हैं परंतु विदेशी आक्रांताओं के आगमन के साथ ही उन्हें अनेक कुप्रथाओं का सामना करना पड़ा, जिसमें बाल विवाह, सती प्रथा, उन्हें शिक्षा से दूर रखना, यहां तक की सभी सुख सुविधाओं से वंचित कर गुलामों सी जिंदगी जीने को मजबूर होना पड़ा, उन्हें पुरुषों के आधीन मान लिया गया, उन्हें सामाजिक गतिविधियों में शामिल होने की अनुमति नहीं थी, उनका दायरा घर की चारदीवारी पर समाप्त हो जाता था वहां पर भी उनको घूंघट के अंदर छुप कर रहना पड़ता था। उनकी योग्यता एवं सामाजिक जुड़ाव इन क्रूर परम्पराओं की बलि चढ़ जाता था। इतनी लम्बी यातनाएं झेलने के उपरांत अन्ततः महिलाओं में जागरुकता के प्रकाश का उद्भव हुआ और आजादी की लड़ाई में उन्होने भी बढ़ चढ़ कर हिस्सा लिया, जिनमें रानी लक्ष्मीबाई, रानी हाड़ी, रानी दुर्गावती आदि अनेको महिलाओं के नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित है।

वर्तमान में महिलाएं भी पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर प्रगति की ओर अग्रसर हो रही हैं, वे देश के विकास हेतु हर क्षेत्र में अपना परचम लहरा रही हैं वे राजनीति, चिकित्सा, शिक्षा, देश की सुरक्षा,

प्रौद्योगिकी एवं खेल के मैदान आदि सभी क्षेत्रों में अपना बराबर सहयोग दे रही हैं, साथ ही साथ एक कुशल ग्रहणी के रूप में अपने घर परिवार का संचालन भी सुचारु रूप से करती हैं। भारतीय इतिहास महिलाओं की उपलब्धियों से परिपूर्ण है, आनन्दीबाई गोपाल राव जोशी पहली भारतीय चिकित्सक थी, सरोजनी नायडू ने साहित्य जगत में अपनी अमिट छाप छोड़ी, मुक्केबाज मैरी काम एक जाना पहचाना नाम है जिन्होंने विपरीत परिस्थितियों में जीवन यापन करते हुए भी अपने देश का नाम ऊँचा किया। इस प्रकार अनेकों उदाहरण भरे पड़े हैं जिनमें महिलाओं ने राष्ट्र निर्माण, राष्ट्र संचालन एवं राष्ट्र हित में अपना भागीरथ योगदान दिया है। देश सदैव उनका कृतज्ञ रहेगा और आने वाली पीढ़ियों की वे सदैव प्रेरणा स्रोत रहेंगी।

मध्य काल से लेकर आधुनिक काल तक महिलाओं की यह विकास की यात्रा आसान न थी परंतु अपने दृढ निश्चय, असीम उत्साह, योग्यता और कठिन परिश्रम के बल पर सभी रूढ़िवादी बेड़ियों को तोड़कर अपने देश के सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास में अपना योगदान दिया और आज भी देश को आत्मनिर्भर बनाने में उनकी भागीदारी दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है, महिलाओं के पराक्रम को समझने के लिए समाज को अपनी रूढ़ीवादी सोच में बदलाव लाने की आवश्यकता है।

सच तो यह है सृष्टि के निर्माण ही महिला और पुरुष दोनों को सहयोग से हुआ है, दोनों एक दूसरे के पूरक है जहां पुरुष अपनी शारीरिक सौष्ठव और मजबूत इरादो के कारण श्रेष्ठ है वहीं महिलाएं अपनी प्रबल इच्छाशक्ति एवं मानसिक दृढ़ता के कारण किसी भी कठिन परिस्थिति को संभालने में सक्षम होती हैं अतः समाज के विकास में दोनों का बराबर का योगदान है, बल्कि कई क्षेत्रों में तो महिलाएं अपने कोमल और मानवीय संवेदनापूर्ण व्यवहार के कारण पुरुषों से भी अधिक श्रेष्ठ परिणाम देने में सक्षम है जैसे शिक्षा, चिकित्सा आदि, अतः उन्हें किसी तरीके से कमतर नहीं आंकना सृष्टि के साथ अन्याय है। देश और समाज के सर्वांगीण विकास के लिए दोनों का योगदान आवश्यक है, क्योंकि जिस देश के समस्त नागरिक अपने देश के विकास और उन्नति में सहयोग देते हैं वह अपेक्षाकृत अधिक मजबूत और आत्मनिर्भर होता है अतः समाज का कर्तव्य है कि महिलाओं को भी अपनी ऊंची उड़ान उड़ने के लिए पंख उपलब्ध कराएं साथ ही पुरुष प्रधान समाज की परिकल्पना को त्याग कर महिलाओं को अपना प्रतिद्वंदी न समझ कर सहयोगी समझें। साथ ही आवश्यक है कि समाज की दबी, कुचली और पिछड़ी महिलाओं के स्तर को भी सामाजिक, मानसिक एवं आर्थिक रूप से सुदृढ करने का प्रयास करें तभी देश के विकास का पहिया तेजी से घूमेगा और हमारा देश एक मजबूत, आत्मनिर्भर एवं सुरक्षित देश के रूप में विश्व पटल पर स्थापित हो सकेगा।

नारियाँ पुरुषों से नहीं हैं कमतर

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
बस्ती, उत्तर प्रदेश

नारी दिवस पर नारियों को, हम करते हैं नमन,
नारी बिन किसी का भी, महकता नहीं है चमन।
नारी के महत्ता को लिखने में सदियाँ कम पड़े,
सच में नरियाँ ही करती हैं, इस सृष्टि का सृजन।।

नारी दिवस पर हम महिलाओं की करें जयकार,
शेष दिनों में फिर क्यूँ! करते हम गलत व्यवहार।
घर को सजाती नारी, माँ, बेटी, बहन व पत्नी बन,
परनारी के लिए क्यूँ! लाते हम कुत्सित विचार।।

नारी दिवस के दिन नारियों की करें खूब बड़ाई,
शेष दिनों में फिर क्यूँ! हम करने लगते हैं लड़ाई।
नारियों के बिना जीवन का कोई अर्थ नहीं होगा,
हम अक्सर नारियों की करते रहते हैं ढेरों बुराई।।

अवनि से अम्बर तक नारियों का हो रहा सफर,
हर क्षेत्र में नारियों के प्रतिभा का हो रहा असर।
शिक्षा, राजनीति, खेल, सेना या सुरक्षा उपक्रम,
कहीं भी नारियाँ आज पुरुषों से नहीं हैं कमतर।।

फिर क्यूँ! बेटियों को गर्भ में ही मार दिया जाता है,
घर के चहारदीवारी में उन्हें जकड़ दिया जाता है।
अनगिनत पाबंदियों में आज भी जीने को मजबूर,
प्रायः उनकी इच्छाओं को कुचल दिया जाता है।।

प्रकाशक
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

लघु कथाएँ लिखो पुरस्कार जीतो

मेरी अभिव्यक्ति

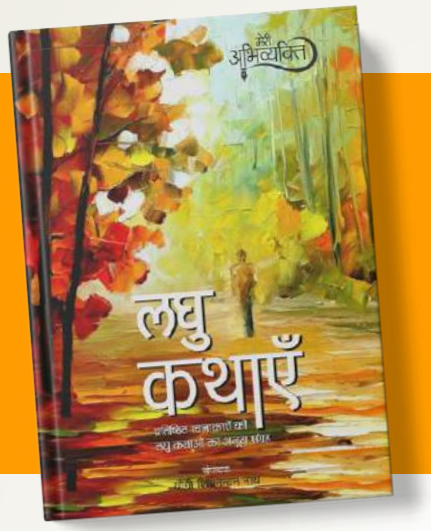

फाउण्डेशन द्वारा हिंदी भाषा के संवर्धन एवं संरक्षण हेतु अखिल भारतीय लघुकथा संकलन (मेरी अभिव्यक्ति–लघु कथाएँ) सहभागिता सहयोग से पुस्तक का प्रकाशन किया जा रहा है।

लघु कथाएं हमारे जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। लघुकथ. ाएँ बुनियादी समस्याओं, व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र से जुड़ी संवेदनाओं की तात्विक अभिव्यक्ति है।

फाउण्डेशन द्वारा लघु कथा संग्रह में प्रकाशित सर्वश्रेष्ठ तीन रचनाकारों को पुरस्कृत धनराशि क्रमशः 11000/-, 5100/-, 2500/- का चेक, सम्मान पत्र एवं पाँच पुस्तकें उपहार स्वरूप डाक द्वारा प्रेषित की जाएंगी।

विशेष

फाउण्डेशन, देश के प्रतिष्ठित लघुकथाकारों से पर्यावरण, प्रकृति, नारीशक्ति, जीवदया, संस्कार, शिक्षा, स्वास्थ्य, लोक संस्कृति, जीवन दर्शन, नैतिकता, कर्तव्य परायणता, मानवीय समानता, सद्भावना, अथवा अन्य राष्ट्रहित विषयों पर आधारित लघु कथाएं आमंत्रित करता है।

- लघुकथाएँ स्वरचित, अप्रकाशित एवं मौलिक होनी चाहिये।
- प्रत्येक रचनाकार को पुस्तक में चार पृष्ठ आवंटित किये जायेंगे।
- कम से कम पाँच लघुकथाएँ प्रेषित करनी आवश्यक है। जो एक या अधिक विषयों पर आधारित हो सकती है।
- पुस्तक में चार रचनाओं का प्रकाशन किया जायेगा।
- प्रत्येक लघु कथा शब्द सीमा अधिकतम 250 शब्दों से अधिक नहीं होनी चाहिये।
- लेखक / लेखिका का नाम एवं फोटो, स्थान, राज्य, ई मेल आई.डी. पुस्तक में प्रकाशित किया जाएगा।
- फाउण्डेशन द्वारा प्रत्येक सहभागी लेखक/लेखिका को आकर्षक सम्मान पत्र, पाँच पुस्तकें उपहार स्वरूप डाक द्वारा प्रेषित की जाएंगी।
- पुस्तक विवरण : साईज – 5.25 x 8.5 इंच, रंगीन आवरण (लेमिनेटेड), इनर ब्लैक एवं व्हाईट रहेगा।
- यह पुस्तक आई.एस.बी.एन. के साथ प्रकाशित की जायेगी।
- लेखक/लेखिका अपनी रचना यूनिकोड/कृतिदेव – वर्ड फाईल में टाईप करा कर ही भेजें। साथ में पी.डी.एफ. फाईल, बायोडेटा, फोटो एवं सहयोग राशी की रसीद ई मेल करें : gssfoundation9@gmail.com

- **पंजीकरण सहभागिता सहयोग राशि : ₹2500/– निम्न खाते में जमा करें :–**

Goraksh Shaktidham Sevarth Foundation
HDFC Bank
A/C : 50200067261443
IFSC : HDFC0009412
Indore (Madhya Pradesh)India

सम्पर्क : योगी शिवनन्दन नाथ: 74154 10516, +91 731 491 8681

Goraksh Shaktidham Sevarth Foundation Is Registered u/s 12A Of The Income Tax Act 1961 & With That Director Of Income Tax (Exemptions) u/s 80G
UR No.AAJCG5116FF20221

पतिव्रता मन्दोदरी

भारतीय संस्कृति में पंच कन्याओं में अहिल्या, द्रोपदी, तारा, कुंती के संग मंदोदरी का नाम भी सम्मिलित है। चिर कुमारी के विशेषण से विख्यात मंदोदरी कश्यप ऋषि के पौत्र असुर राज मयासुर और हेमा नामक अप्सरा की पुत्री के रूप में जानी जाती है। भगवान शिव से धरती के सबसे विद्वान और शक्तिशाली व्यक्ति से विवाहित होने का वरदान प्राप्त होने के फलस्वरूप मंदोदरी का विवाह रावण से हुआ था। मंदोदरी अपने पति के प्रति पूर्ण समर्पण भाव रखने वाली पतिव्रता स्त्री और रावण की पटरानी थी। धर्म ग्रंथों में पतिव्रता का अर्थ है,– वह स्त्री जो अपने पति के अलावा किसी अन्य पुरुष के विषय में नहीं सोचती है। तन–मन से जिसकी पूर्ण निष्ठा अपने पति के पति हो। गरुड़ पुराण के अनुसार ऐसी पत्नी अपने पति को शक्ति देती है। मंदोदरी के चरित्र के इसी पक्ष का विश्लेषण हमारा यह आलेख है।

डॉ. साधना गुप्ता
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
सहायक आचार्य
(राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय)
झालवाड़, राजस्थान

मंदोदरी विदुषी– विद्यावान होने के संग पतिप्रिया और पति परायण थी। उन्हें पति रावण का पूर्ण प्रेम व सम्मान प्राप्त था। वह किसी भी कार्य को करने के पूर्व उसके सत–असत पक्ष पर विचार कर धैर्य पूर्वक निर्णय लेती थी। वह चाहती थी उनके पति के जीवन में सदैव सफलता का सूर्य उदित रहे। उनका सुहाग चिरकाल तक बना रहे। और इसीलिए वह समय–समय पर रावण को प्रभोधित करती थी। उनके द्वारा किए गए यह प्रयास उनके पतिव्रता रूप से साक्षात्कार करवाते हैं।

चार वेद और छः शास्त्रों का ज्ञाता होने के कारण दशानन के नाम से विख्यात रावण जब अपनी बहन के वासनात्मक दृष्टिकोण को नजरअंदाज कर उसके उकसाए जाने पर प्रतिशोध स्वरूप सीता का हरण कर लंका ले जाता है और उन्हें अशोक वाटिका में रखता है तब मंदोदरी अपने पति की इस बात का विरोध करती है। अशोक वाटिका में सीता के कठोर वचनों से आहत रावण जब अपनी तलवार से सीता को मारने को तत्पर होता है तब मंदोदरी बहुत अधिक व्याकुल हो जाती है। वह विवेकशील महारानी व पतिव्रता पत्नी का कर्तव्य निभाती है, शीघ्र निर्णय लेते हुए नीति पूर्ण बातें कहकर रावण को ऐसा करने से रोकती है,– **'सुनत वचन पुनि मारन धावा, मय तनयाँ कहि नीति बुझावा।'** *(1)*

मन्दोदरी सीता हरण की विरोधी थी और चाहती थी कि सीता को ससम्मान राम को लौटा दिया जाए। जब से हनुमानजी लंका दहन करके गए थे, तभी से लंकावासी राक्षसों में भय व्याप्त हो गया था। सभी अपने– अपने निवास पर चिंतन करने लगे थे, उनके दिल–दिमाग में यह शंका घर कर गयी थी कि – 'अब राक्षस कुल की रक्षा का कोई उपाय नहीं है। इसका कारण था हनुमान का अपरिमित सामर्थ्य। वे सोचते थे जिसके दूत का बल अतुलनीय है जब वे स्वयं नगर में आएंगे तो हमारी भलाई कैसे हो सकती है?'

नगरवासियों की यह भयमिश्रित– चिंतातुर प्रतिक्रिया दूतियों के माध्यम से मन्दोदरी के कानों में पहुँचती है तो वह बहुत अधिक व्याकुल हो जाती है। उन्हें पूर्वाभास होता है,– राम से शत्रुता करना उचित नहीं। तब वे धैर्य रखते हुए विवेकशील महारानी और पतिव्रता पत्नी का कर्त्तव्य निभाते हुए महाराज पति रावण को बहुत धैर्य व प्रेम से विनय पूर्वक समझाने का प्रयास करती है। वह रावण को एकांत में ले जाती है,– 'हाथ जोड़कर पति रावण के चरणों में लगती है और नीति रस से पगी हुई वाणी बोलती हैं –' हे प्रियतम! श्रीहरि से विरोध छोड़ दीजिये। मेरे कहने को अत्यंत ही हितकर जानकार हृदय में धारण कीजिए। जिसके दूत की करनी का स्मरण आते ही राक्षसों की स्त्रियों के गर्भ गिर जाते हैं, है प्यारे स्वामी ! यदि भला चाहते हैं तो अपने मंत्री को बुलाकर उसके साथ उनकी स्त्री को भेज दीजिए। सीता आपके कुल रूपी कमलों के वन को दुःख देने वाली जाड़े की रात्रि के समान आयी है। हे नाथ! सुनिये, सीता को लौटाये बिना शंभू और ब्रह्मा के करने पर भी आप का भला नहीं हो सकता–

'रहसि जोरि कर पति पग लागी, बोली वचन नीति रस पागी।
कंत करष हरि सन परिहरहू, मोर कहा अति हित हियँ धरहू।
समझत जासु दूत कइ करनी, स्रवहिं गर्भ रचनीचर घरनी।
तासु नारि निज सचिव बोलाई, पठवहु कंत जो चहहु भलाई।
तव कुल कमल विपिन दुखदाई, सीता सीत निसा सम आई।
सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें, हित न तुम्हार संभु अज किन्हें। *(2)*

वह पतिव्रत धर्म निभाते हुए रावण को सत्य पथ पर चलने के लिए प्रेरित करती है। जिसके लिए नीति का सहारा लेकर रावण को अपनी शक्ति– अल्पता व राम की सामर्थ्य की विशालता की ओर ध्यान आकर्षित करवाती है। मन्दोदरी का स्पष्ट मत था,– रणभूमि पराक्रम देखती है अतः युद्ध बराबर वालों में ही होना चाहिए अन्यथा रक्त बहाकर संहार करना व्यर्थ है। वह कहती है,– 'श्रीराम जी के बाण सर्पो के समान हैं और राक्षसों के समूह मेंढ़क के समान। जब तक वे इन्हें ग्रस नहीं लेते, तब तक हठ छोड़कर उपाय कर लीजिए' अर्थात् सीता को लौटा दीजिये अन्यथा राक्षसों का वंश ही नष्ट हो जाएगा–

राम बान अहि गन सरिस, निकर निसाचर भेक।
जब लगि ग्रस्त न तब लगि, जतनु करहु तजि टेक।। *(3)*

परन्तु समय चक्र के बल के समक्ष मन्दोदरी के कथन को अभिमानी रामायण गंभीरता से नहीं लेता। मंदोदरी के संशय को नारी सुलभ भय की संज्ञा देकर हंसी में उड़ा देता है और उसके प्रति स्नेह प्रदर्शन कर चला जाता है। मन्दोदरी के वचनों पर नाराजगी नहीं दिखाता और मंदोदरी हृदय में पति के प्रति विधाता की प्रतिकूलता पर चिंता ही करती रह जाती है।

मन्दोदरी अप्सरा माता की पुत्री होने के कारण आस्था एवं गहन विश्वास से इस तथ्य से परिचित थी कि भगवान विष्णु ने संसार के कल्याण एवं हित सम्वर्धन हेतु अयोध्या को अपनी लीला स्थली बनाकर वहाँ श्रीराम के रुप में जन्म लिया है और पिता की आज्ञा से वन गमन करते हुए पृथ्वी को राक्षसों से हीन करने का बीड़ा उठाया है। अतः मन्दोदरी को जब यह पता चलता है कीं राम आ गये हैं। उन्होंने खेल–खेल में ही समुद्र को बंधवा लिया है। अर्थात् सेतु निर्माण हो चुका है, अब उन्हें लंका तक पहुँचने में विलंब नहीं लगेगा, तब वह रावण द्वारा पूर्व में उसकी बात को हँसी में उड़ा कर अस्वीकार कर देने पर भी रुष्ठ नहीं होती। यह नहीं सोचती कि 'अंकुर नहीं फूटेंगे, तो बीज ही क्यों बोया जाय?' यह तो कर्महीनता होगी जो उसे कदापि मंजूर नहीं। वह पुनः प्रयास करती है पूर्ण निष्ठा, सहृदयता और ईमानदारी के संग। वह पत्नी के अधिकारों का उपयोग करते हुए पति को हाथ पकड़ कर अपने महल में ले जाती है, रावण के चरणों में सिर नवाकर, आँचल पसार कर अत्यंत मनोहर वाणी में नीति पूर्ण कथन बोलती है,– 'है प्रिय! क्रोध त्याग कर मेरा वचन सुनिये– 'वैर उसी से करना चाहिये जिसे बुद्धि और बल के द्वारा जीत सकें। आप में और श्रीराम में वैसा ही अंतर है जैसा जुगनू और सूर्य में।'*(4)* वह विदुषी है। श्रीराम के विषय में बहुत कुछ जानती है अतः कहती है– 'जिन्होंने विष्णु रूप में अत्यंत बलवान मधु और कैटभ दैत्य मारे, वाराह– नृसिंह रूप में अत्यधिक शूरवीर दिति पुत्रों हिरण्याक्ष और हिरण्यकश्यप का संहार किया, जिन्होंने वामन रूप में दैत्यराज बलि को बाँधा और परशुराम रूप में सहस्रबाहु को मारा, वे ही भगवान पृथ्वी का भार हरण करने के लिये राम रूप में अवतीर्ण हुए हैं।'*(5)* यह सब उदाहरण प्रस्तुत कर मन्दोदरी अपनी विद्वता प्रदर्शित नहीं कर रही है वरन् रावण का ध्यान इस ओर आकृष्ट करवा कर उसे यह चिंतन करने के लिए बाध्य करना चाहती है कि श्क्या तुम इन सबसे अधिक शक्तिशाली हो? क्योंकि लोक व्यवहार सिखाता है,– कांटा बनने में कोई बुराई नहीं है परन्तु चुभने से पूर्व यह जान लेना चाहिए कि किस के पांव में चुभ रहे हो? अतः चाहती है रावण स्वयं अपनी स्थिति का आकलन करे और यदि प्रत्युत्तर नकारात्मक है, जो निश्चित रूप से है ही, इसलिए कहती है– 'हे नाथ! उनका विरोध न कीजिये, जिनके हाथ में काल, कर्म और जीव सभी हैं। अतः आप श्रीराम के चरण कमलों में सिर नवाकर, उनकी शरण में जाकर, उन्हें जानकीजी को सौंप दीजिए और स्वयं अपने पुत्र को राज्य देकर वन में जाकर श्रीरघुनाथ जी का भजन कीजिये।'*(6)*

मन्दोदरी येन केन प्रकारेण राम से वैर त्यागने के लिए रावण को तैयार करना चाहती है क्योंकि इसी में उसका हित है। राम शत्रु नहीं स्वामी है, रावण से अभिमान में अनैतिक कार्य हुआ है जिसका सुधार अनिवार्य है। वह पतिव्रता स्त्री होने के कारण विपत्ति में पति को अकेला नहीं छोड़ती। सतत विनय पूर्वक उसे अपनी गलती का अहसास करवा कर सुधार की अपेक्षा का प्रयत्न करती है। जब

रावण उसकी उपरोक्त बातों पर ध्यान नहीं देता तो वह रावण को संतों द्वारा कहे गए नीति वचनों का स्मरण भी दिलवाती है और कहती है,– 'संतजन ऐसी नीति कहते हैं कि चौथेपन में राजा को वन में चला जाना चाहिए। आप विषयों की सारी ममता छोड़कर उन्हीं शरणागत पर प्रेम करने वाले भगवान का भजन कीजिये जिनके लिए श्रेष्ठ मुनि साधन करते हैं और राजा राज्य छोड़कर वैरागी हो जाते हैं।'(7)

भावी अनिष्ट की आशंका से उसका रोम–रोम कांप उठता है। वह करुणा पूर्ण सजल नेत्रों से पति के चरण पकड़ कर अपने सुहाग के अचल रहने हेतु श्रीरघुनाथ का भजन करने का निवेदन करती है। परंतु रावण उसकी नहीं सुनता। काल के बस पति के अभिमान को वह समझती है। इसी कारण वह पति पर क्रोध नहीं करती, उन्हें समझाने की हर सम्भव कोशिश करती है। अपना पतिव्रत धर्म निभाती है। दुःखी होती है, जानती है वह पतिव्रता होकर भी सावित्री की तरह यमराज से नहीं लड़ सकती क्योंकि उसके पति से नारी का अपमान हुआ है जिसे सुधारा नहीं गया तो दण्ड तो भुगतना होगा। नारी का अपमान हर युग में अक्षम्य है।

राम समुद्र पार कर लंका के किनारे पर आ जाते हैं परंतु रावण लंका की चोटी पर स्थित महल में नृत्य संगीत का आनंद ले रहा होता है। तब राम एक ही बाण से रावण के छत्र–मुकुट और मंदोदरी के कर्णफूल काट कर गिरा देते हैं जिससे मन्दोदरी के हृदय में अनिष्ट की शंका गहरा जाती है। वह चिंतित हो उठती है। सजल नेत्रों से करबद्ध होकर अपने सुहाग की रक्षा के लिए, सुहाग स्वरूप पति रावण से पुनः राम से विरोध छोड़ देने की बात कहती है। उन्हें मनुष्य मानने के हठ को त्यागने की बात करते हुए,– 'वेद जिनके अंग–अंग में लोकों की कल्पना करते हैं ऐसे विश्वरूप में श्रीराम का रूपक बांधते हुए पाताल को चरण, ब्रह्मलोक को सिर, अन्य लोकों की स्थिति भिन्न–भिन्न अंगों पर, काल को भृकुटी संचालन, सूर्य को नेत्र, बादलों के समूह को बाल, अश्विनी कुमार को नासिका, रात और दिन को अपार निमेष (पलक झपकना), दसों दिशाओं को कान, वायु को श्वास, वेद को वाणी, लोभ को अधर, यमराज को भयानक दाँत, माया को हँसी, दिक्पाल को भुजाएँ, अग्नि को मुख, वरुण को जीभ, उत्पत्ति–पालन और प्रलय को चेष्टा, 18 प्रकार की असंख्य वनस्पतियों को रोमावली, पर्वत को अस्थियाँ, नदियों को नसों का जाल, समुद्र को पेट, नरक जो नीचे की इंद्रियाँ, शिव को अहंकार, ब्रह्मा को बुद्धि, चंद्रमा को मन, विष्णु को चित्त बताते हुए प्रभु श्रीराम से वैर छोड़ उनके चरणों से प्रेम करने के लिए निवेदन करती है।'(8) पर अहंकार में आकंठ डूबा रावण उन्हें मानने के स्थान पर पत्नी की कही गई बातों की अवज्ञा करता है। यहाँ तक कि उसे अवगुणी तक कह देता है।

> दुनिया उन्हीं पर भरोसा करती है जिन्हें खुद पर भरोसा होता है।

श्रीराम रावण को समझाने के लिए अंगद को दूत बनाकर भेजते हैं। अंगद रावण के एक पुत्र को रास्ते में खेल– खेल में जरा सी बहस होने पर ही मार देते हैं और रावण के दरबार में पहुंचते हैं। रावण से वार्तालाप होता है अंगद अपना चरण रोप कर उसे हटाने के लिए कहते हैं पर कोई चरण हिला भी नहीं पाता। संध्या समय उदास मुँख रावण को मन्दोदरी उसके द्वारा की गयी अपनी समस्त अवज्ञा को नजरअंदाज कर पुनः प्रबोधन देती है। इस पृथ्वी के सबसे अमानुषिक कर्म युद्ध को रोकने के लिए मन्दोदरी पुनः अपना पतिव्रत धर्म निभाती है, पति को समझाती है परन्तु इस बार वह सीधे– सीधे रावण की शक्ति– सामर्थ्य की तुलना व्यावहारिक धरातल पर घटित घटनाओं की साक्षी में राम के शक्ति– सामर्थ्य से करते हुए वास्तविकता की आँखों में आँखें डालने के लिए पति को प्रबोधन द्वारा मानसिक रूप से स्व निर्णय कर कुबुद्धि को त्यागने के लिये कहती है,– 'आपका श्रीराम जी से युद्ध शोभा नहीं देता। उनके छोटे भाई ने एक जरा सी रेखा खींच दी थी, उसे भी आप नहीं लांघ सके,– ऐसा तो आपका पुरुषार्थ है। आप उन्हें संग्राम में जीत पायेंगे? जिनके दूत का ऐसा काम है। खेल–खेल में ही समुद्र लाँघ वह वानरों में सिंह हनुमान आपकी लंका में निर्भय चला आया। रखवालों को मार कर उसने अशोक वन उजाड़ डाला। आपके देखते–देखते उसने अक्षय कुमार को मार डाला और सम्पूर्ण नगर को जला कर राख कर दिया। उस समय आपके बल का गर्व कहाँ चला गया था? साथ ही वह मारीच प्रसंग, जनक सभा, जयंत प्रसंग, शूर्पणखा प्रसंग, विराध, खर–दूषण, कबन्ध और बाली वध की चर्चा करती है, राम द्वारा समुद्र को खेल–खेल में बंधवाना और रावण हित में अंगद को दूत बनाकर भेजने के सभी प्रसंगों का स्मरण करवाती है जो चीख–चीख कर राम की शक्ति–सामर्थ्य के समक्ष रावण की अक्षमता को बयान करते हैं। इनके माध्यम से कहती है –' तब भी आप उनसे लड़ने की बात सोचते हो? आपको लज्जा नहीं आती? उन्हें बार–बार मनुष्य कहते हैं। आप व्यर्थ ही मान, ममता और मद का बोझा ढो रहे हैं। मन्दोदरी यहाँ स्वयं को पूर्णतः विवश, असहाय महसूस करते हुए भी दुःखी हृदया पति रक्षा में सन्नद्ध खड़ी नजर आती है, जो भी है वह अपने पति का साथ नहीं छोड़ेगी। उन्हें समझाने के भी सतत प्रयत्न करेगी, यही तो पतिव्रता का धर्म है, कर्तव्य है। अतः पुनः कहती है आपने श्री रामजी से विरोध कर लिया और काल के वश में होने से आप के मन में अब भी ज्ञान नहीं उत्पन्न होता। काल दण्ड लेकर किसी को नहीं मारता। वह धर्म, बल, बुद्धि और विचारों को हर लेता है। जिसका काल, मृत्यु समय निकट आ जाता है, उसे आपकी ही तरह भ्रम हो जाता है।'(9)

वह ज्ञान की मथानी से मन को मथने की बात करती है। बिती ताहि बिसार कर आगे की सुधि लेने का पति रावण से आग्रह करती है,– 'आपके दो पुत्र मारे गये और नगर जल गया। जो हुआ सो हुआ! अब भी इस भूल की समाप्ति कर दीजिए। श्रीराम से वैर त्याग दीजिये और कृपा के समुद्र श्रीराम को भज कर निर्मल यश लीजिये।'(10) परन्तु दल–दल में फूल बिझाने से वह फुलवारी तो नहीं बन जाता?

अंततोगत्वा रावण राम के हाथों मृत्यु को प्राप्त होता है। तब विलाप करते हुए भी मन्दोदरी इसी बात को दुहराती है,– 'काल के पूर्ण वश में होने से तुमने किसी का कहना नहीं माना और चराचर के नाथ परमात्मा को मनुष्य करके जाना वहीं राम से भी यह अपेक्षा रखती है कि वे उसके पति को सद्गति प्रदान करेंगे।

यह सम्पूर्ण प्रसंग मन्दोदरी के चरित्र को पतिव्रता पत्नी के रूप में महिमान्वित करता है। पृथ्वी का सबसे विद्वान और शक्तिशाली पुरूष पति रूप में प्राप्त हो, पर यदि वह पति परमात्मा से विरोध ठान ले, स्त्री की मर्यादा का हनन करे तब धैर्य रखते हुए पति को नीति पूर्ण बातें समझाने का सतत प्रयास पतिव्रता स्त्री ही कर सकती है। मन्दोदरी ने यह किया है पूर्ण निष्ठा और समर्पण के संग।

वाल्मीकि ने रामायण में यह सब बातें मन्दोदरी से रावण की मृत्यु के बाद विलाप करते हुए कहलवाई है परन्तु तुलसी ने मानस में इन्हें युद्ध पूर्व मन्दोदरी से रावण को प्रबोधित करवा कर। इस प्रकार जहाँ एक ओर मन्दोदरी के चरित्र को महिमान्वित कर दिया है वहीं दूसरी ओर यह सम्पूर्ण प्रसंग प्रकरण वक्रता का सुंदर उदाहरण बन गया है। पतिव्रता मन्दोदरी पाठक की सजल श्रद्धा की भागीदार बनती है।

सन्दर्भ –
1. रामचरितमानस– गोस्वामी तुलसीदास पृ. 633
2. रामचरितमानस– गोस्वामी तुलसीदास पृ. 684,85
3. रामचरितमानस– गोस्वामी तुलसीदास पृ. 685
4. रामचरितमानस– गोस्वामी तुलसीदास पृ. 713
5. रामचरितमानस– गोस्वामी तुलसीदास पृ.713
6. रामचरितमानस– गोस्वामी तुलसीदास पृ. 713
7. रामचरितमानस– गोस्वामी तुलसीदास पृ. 714
8. रामचरितमानस– गोस्वामी तुलसीदास पृ.720–21
9. रामचरितमानस– गोस्वामी तुलसीदास पृ.740–42
10.रामचरितमानस– गोस्वामी तुलसीदास पृ. 742

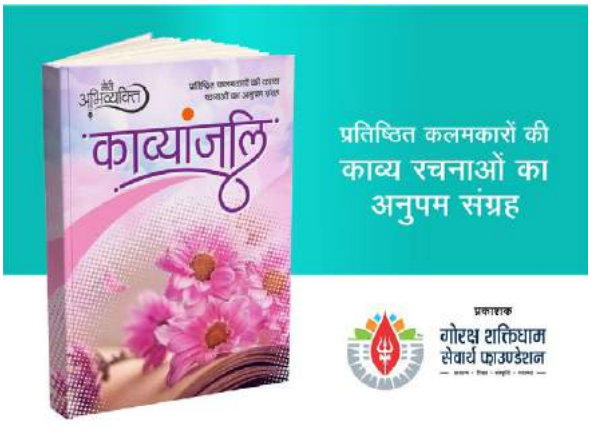

त्यागी और बैरागी भरत

ब्रह्मेश्वर नाथ मिश्र
आरा, भोजपुर
बिहार

भरत सम नहिं त्यागी बैरागी ।
पिता दिन्हि एहि अवध के राजू,
तिलक सजावन कहहिं समाजू,
लोभ मोह नहिं जागी ।
भरत सम नहिं त्यागी.....

गए बिपिन सियराम मनाने,
गहि प्रभु चरन लगहिं पछिताने,
हमहीं अनर्थ के भागी ।
भरत सम नहिं त्यागी.....

प्रभु की चरन पादुका ले कर,
किए बिराजित सिंहासन पर,
राम चरन चित लागी ।
भरत सम नहिं त्यागी.....

नन्दीग्राम में कुटी बनाए,
जटा मुकुट मुनि वेष सजाए,
सुख ऐश्वर्य सब त्यागी ।
भरत सम नहिं त्यागी.....

रहा अवधि का एक अधारा,
ऐहैं एक दिन अवध कुमारा,
एहि असरन्ह तनु राखी ।
भरत सम नहिं त्यागी.....

तिलक संस्कार

डॉ. अलका यादव
स्वतंत्र लेखन
बिलासपुर
छत्तीसगढ़

तिलक लगाना हिंदू परंपरा का एक विशेष अंग है. सभी प्रकार के पूजा–पाठ, यज्ञ और अनुष्ठानों में तिलक लगाए जाते हैं. इसके अलावा किसी शुभ कार्य के लिए घर से बाहर जाने से पहले भी तिलक लगाने का महत्व है. हिंदू धर्म में केवल माथे पर ही नहीं बल्कि कंठ,नाभि, पीठ, भुजाओं पर भी तिलक लगाए जाते हैं

तिलक लगाने का वैज्ञानिक महत्व ललाट पर तिलक धारण करने से मस्तिष्क को शांति और शीतलता मिलती है तथा सेराटोनिन और बिटा एंडोर्फिन नामक रसायनों का स्त्राव संतुलित मात्रा में होने लगता है इन रसायनों की कमी से उदासीनता और निराशा के भाव पनपने लगते हैं अतः तिलक निराशा और उदासीनता से मुक्ति प्रदान करता है

हिंन्दू संस्कृति व सनातन धर्म में तिलक का बहुत महत्व माना जाता है। कोई धार्मिक कार्य या पूजा–पाठ में सबसे पहले सबको तिलक लगाया जाता है। यही नही जब हम कभी किसी धार्मिक स्थल पर जाते हैं तब भी सर्वप्रथम हमें तिलक लगाया जाता है। इसलिए जब भी कोई व्यक्ति शुभ काम के लिए जाता है तो उसके मस्तक पर तिलक लगाकर उसे विदा किया जाता है। लेकिन क्या आप जानते हैं तिलक आपकी कई मनोकामना भी पूरी करता है।

शास्त्रों में तिलक के संबंध में विस्तार से बताया गया है। अलग–अलग पदार्थों के तिलक करने से अलग–अलग कामनाओं की पूर्ति होती है। चंदन, अष्टगंध, कुमकुम, केसर आदि अनेक पदार्थ हैं जिनके तिलक करने से कार्य सिद्ध किए जा सकते हैं। यहाँ तक कि ग्रहों के दुष्प्रभाव भी विशेष प्रकार के तिलक से दूर किए जा सकते हैं। तिलक का मुख्य स्थान मस्तक पर दोनों भौहों के बीच में होता है, क्योंकि इस स्थान पर सात चक्रों में से एक आज्ञा चक्र होता है। शास्त्रों के अनुसार प्रतिदिन तिलक लगाने से यह चक्र जाग्रत हो जाता है और व्यक्ति को ज्ञान,समय से परे देखने की शक्ति, आकर्षण प्रभाव और उर्जा प्रदान करता है। इस स्थान पर अलग– अलग पदार्थों के तिलक लगाने का अलग–अलग महत्व है। इनमें सबसे अधिक चमत्कारी और तेज प्रभाव दिखाने वाला पदार्थ केसर है। केसर का तिलक करने से कई कामनाओं की पूर्ति की जा सकती है।

जो व्यक्ति अपने जीवन में सफलता,आकर्षक व्यक्तित्व, सौंदर्य, धन, संपदा, आयु, आरोग्य प्राप्त करना चाहता है उसे प्रतिदिन अपने माथे पर केसर का तिलक करना चाहिए। केसर का तिलक लक्ष्मीदेवी को प्रसन्न करता है। साहस, शांति, लंबी आयु और आरोग्यता मिलती है। ज्ञान,लक्ष्मी से धन, वैभव, आकर्षण भौतिक पदार्थों की प्राप्ति होती है। केसर में जबर्दस्त आकर्षण प्रभाव होता है। प्रतिदिन केसर का तिलक लगाने से व्यक्ति में आकर्षण प्रभाव पैदा होता है।

सकल ताड़ना के अधिकारी!

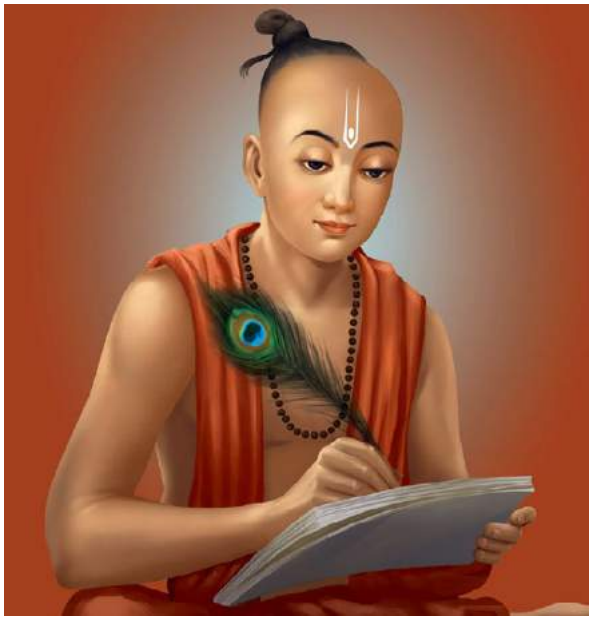

सोनल मंजू श्री ओमर
स्वतंत्र लेखिका, शिक्षिका एवं
साहित्य की विद्यार्थी
राजकोट, गुजरात

गोस्वामी तुलसीदास कृत श्रीरामचरितमानस ग्रंथ की चौपाई – **'ढोल गंवार सूद्र पशु नारी, सकल ताड़ना के अधिकारी'** पर आजकल हंगामा मचा हुआ है। कई जगहों पर इस ग्रंथ की प्रतियाँ भी जलाई जा रहीं हैं। इस चौपाई पर आपत्ति करने वालों का कहना है कि इस चौपाई में तुलसीदास जी ने मानव समुदाय के किसी विशेष समुदाय को गंवार या सूद्र कैसे कह दिया, साथ–ही–साथ नारी, सूद्र और गंवार को ढोल और पशु की ही भांति मार खाने का हकदार कैसे माना है। लोगों का ऐसा मानना सही है या गलत यह मैं आपको तर्कशीलता के आधार पर समझाने का प्रयास करती हूँ –

सर्वप्रथम तो हमें प्रस्तुत पंक्ति की पूरी चौपाई जाननी चाहिए जिससे हमें ज्ञात होगा कि इसे किस संदर्भ में कहा गया है। चौपाई कुछ इस प्रकार है...

'प्रभु भल किन्ह मोहि सिख दीनी,
मरजादा पुनि तुम्हरी किन्ही।
ढोल गंवार सूद्र पशु नारी,
सकल ताड़ना के अधिकारी।।'

प्रभु श्रीराम जब तीन दिनों तक समुद्र से लंका तक का रास्ता मांग रहे होते है और समुद्र देवता कुछ नही बोलते तो प्रभु श्रीराम क्रोध में समुद्र को जलविहीन बनाने हेतु अपना धनुष उठा लेते है और तब समुद्र को अपनी गलती का एहसास होता है और वह प्रभु श्रीराम के समक्ष हाथ जोड़कर उपरोक्त पंक्तियों को दोहराता है।

इस चौपाई की प्रथम पंक्ति से स्पष्ट हो रहा है कि प्रभु ने भला किया समुद्र को सीख देकर, जिससे उसका उद्धार हुआ। और फिर समुद्र उदाहरण देते हुए कहते है कि जैसे आपकी सीख से मेरा उद्धार हुआ वैसे ही ढोल, गंवार, सूद्र, पशु, नारी भी उद्धार की अधिकारी है।

जिस प्रकार भगवान को 'ताड़नहार' कहा जाता है अर्थात माया–मोह, भव–बंधन से पार लगाने वाला, उद्धार करने वाला। उसी प्रकार सिद्ध होता है कि 'ताड़न' का अर्थ 'उद्धार' है ना कि दण्ड या पिटाई।

अब इस चौपाई के शब्दों को थोड़ा और समझने का प्रयत्न करते है। जैसा कि ज्ञात है कि यह ग्रंथ लगभग 400 वर्ष पूर्व लिखा गया है। तब से लेकर अब तक हमारी भाषा के साथ–साथ शब्दों के अर्थों में भी बहुत परिवर्तन हुआ है। उदाहरणस्वरूप सूत्र शब्द का हिंदी अर्थ धागा या डोरी होता है और संस्कृत में सूत्र को ज्ञान की भाषा के रूप में प्रयुक्त किया जाता है जैसे वैज्ञानिक सूत्र, गणतिय सूत्र आदि। इसी प्रकार हिंदी में अर्थ शब्द को अर्थशास्त्र या मतलब के लिए प्रयुक्त करते है और अंग्रेजी में अर्थ से तात्पर्य ध रती से होता है, ठीक इसी प्रकार – 1. ढोल (अर्थात वाद्य यंत्र जिसे हमारी सनातन संस्कृति में उत्साह का प्रतीक माना गया है। इसके थाप से हमें सकारात्मक ऊर्जा मिलती है। जिससे जीवन स्फूर्तिमय, उत्साहमय हो जाता है। इसलिए विभिन्न शुभ अवसरों पर आज भी ढोलक बजाया जाता है।)

2. गंवार (अर्थात गांव के रहने वाले लोग जो छल–प्रपंच से दूर अत्यंत ही सरल स्वभाव के होते हैं, जिनमें ईश्वर का वास होता है और अत्यधिक परिश्रमी होते है। इनमें वे सभी अनेकों देवी–देवता और संत महर्षि गण भी है जो आदि–अनादि काल में गाँव में निवास किए।)

3. सूद्र (अर्थात चौथा वर्ण जो अपने कर्म व सेवाभाव से इस लोक की दरिद्रता को दूर करता है और कर्म ही सेवा है इस सेवा व कर्म भाव से लोक का कल्याण करता है। यह वर्ग ईश्वर को काफी प्रिय होता है।)

4. पशु (अर्थात जो एक निश्चित पाश में रहकर हमारे लिए उपयोगी हो। प्राचीन काल और आज भी हम अपने दैनिक जीवन में भी पशुओं से उपकृत होते रहे हैं। पहले तो वाहन और कृषि कार्य में भी पशुओं का उपयोग किया जाता था। आज भी हम दूध, दही, घी विभिन्न प्रकार के मिष्ठान्न इत्यादि के लिए पशुओं पर ही निर्भर हैं। जिनको हम देव प्रतीक मानकर पूजते भी है।)

5. नारी (अर्थात जगत– जननी, आदि– शक्ति, मातृ– शक्ति जिसके बिना इस चराचर जगत की कल्पना ही मिथ्या है। नारी का हमारे जीवन में माँ, बहन, बेटी इत्यादि के रूप में बहुत बड़ा योगदान है। नारी के ममत्व से ही हम अपने जीवन को भली– भांति सुगमता से व्यतीत कर पाते हैं। जो विशेष परिस्थिति में पुरुष जैसा कठिन कार्य करने से पीछे नहीं हटती है। जिसे हमारी संस्कृति में पुरुषों से अधिक महत्त्व प्राप्त है।)

अब कुछ लोग कहेंगे कि चलो ठीक है गंवार, सूद्र और नारी के लिए तो ताड़ना का अर्थ उद्धार करना मान लेते है परन्तु ढोल और पशु का उद्धार कैसे किया जा सकता है?

दरअसल एक–एक शब्द में गूढ़ अर्थ निहित होता है, इसी प्रकार प्रस्तुत चौपाई में ताड़ना शब्द के कई अर्थ हैं जो भिन्न–भिन्न शब्दों के साथ भिन्न–भिन्न अर्थ दे रहा है। जैसे यहाँ ढोल के साथ ताड़ना शब्द का अर्थ पीटना है। गंवार, सूद्र और नारी के साथ ताड़ना शब्द का अर्थ उद्धार करना है और पशु के साथ ताड़ना शब्द का अर्थ ध्यानपूर्वक दृष्टि रखना है।

अब कुछ लोग कहेंगे कि मैं तो अपनी मनमर्जी से अर्थ गढ़ रही हूँ!

लेकिन ऐसा नही है, यदि आपने हिंदी भाषा में अलंकार पढ़े होंगे तो यह बात आपको अच्छे से समझ आएगी। आइए मैं आपको श्लेष अलंकार की एक सुप्रसिद्ध पंक्ति का उदाहरण देकर समझाती हूँ...

'सुबरन को खोजत फिरत, कवि, व्यभिचारी, चोर।'

यहाँ सुबरन का प्रयोग एक बार किया गया है, किन्तु पंक्ति में प्रयुक्त सुबरन शब्द के तीन अर्थ हैं। कवि के सन्दर्भ में सुबरन का अर्थ अच्छे शब्द, व्यभिचारी के सन्दर्भ में सुबरन का अर्थ सुन्दर वर्ण की स्त्री, और चोर के सन्दर्भ में सुबरन का अर्थ सोना है।

अब आप सोचिए जिस श्रीरामचरितमानस में केवट को, निषादराज को, शबरी माता को, अनसुइया माँ को, अहिल्या माता को इतना मान– सम्मान दिया गया हो। जिस संस्कृति में यहां तक कहा गया हो– यत्र नार्यस्तु पूज्यंते, रमन्ते तत्र देवताः (जहां नारी पूजनीय हो, वहां देव भी निवास करते हैं)। उस संस्कृति के महान् संत, एक महान धार्मिक ग्रंथ में नारी को पिटाई योग्य कैसे कह सकते हैं या किसी व्यक्ति समुदाय को बुरा– भला कैसे कह सकते है? यहाँ इस तर्क से भी यह बात स्पष्ट हो रही है कि इस चौपाई पर उठ रहे विवाद बेकार है।

अभी इसी प्रकार कुछ माह पूर्व शिवलिंग के अर्थ को भी गलत तरह से प्रस्तुत करने की चेष्ठा की जा रही थी। कई लोग शिवलिंग को शिव का गुप्तांग कह रहे थे। ये वही लोग हैं जिन्हें संस्कृत भाषा की समझ नही है। जैसे कि मैंने ऊपर भी कहा है कि अलग–अलग भाषाओं में एक जैसे उच्चारित शब्द के भिन्न–भिन्न अर्थ होते है। इसीलिए जिस लिंग शब्द को लोग गुप्तांग से जोड़ रहे थे उस लिंग शब्द का वास्तव में संस्कृत भाषा मे अर्थ– चिन्ह, प्रतीक या निशान होता है। इसीलिए शिवलिंग का अर्थ हुआ शिव का चिन्ह, शिव का प्रतीक, शिव का निशान।

अब जरा सोच के बताइए भाषा विज्ञान में हम पुल्लिंग और स्त्रीलिंग पढ़ते हैं। पर क्या स्त्री का भी लिंग होता है, नही ना?

अब शिवलिंग के आकार की बात करते है। स्कन्दपुराण में बताया गया है कि आरम्भ में ऋषि–मुनि दीपक पर ध्यान केंद्रित करके भगवान की आराधना करते थे, लेकिन लम्बी अवधि तक प्रयास करने के बाद भी वो ध्यान केंद्रीत नही कर पाए क्योकि, हवा चलने के कारण दीपक की लौ हिलती रहती थी। तब उन्होंने इसका विकल्प खोजा और दीपक के लौ के आकार का पत्थर बनाया और उसे शिवलिंग के रूप में स्थापित और मान्य किया। इसलिए शिवलिंग वास्तव में दीपक या प्रकाश का प्रतीक है जो हमें भगवान को पाने की राह दिखाता है।

अन्ततः मैं यही कहूँगी कि सही अर्थों को जाने बिना शब्दों के अर्थ का अनर्थ न करे। बाकी.... **'जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तिन तैसी।'**

लघुकथा

बेटियाँ

डॉ. ममता बनर्जी 'मंजरी'
गिरिडीह 'झारखण्ड'

'ठीक है शर्मा जी, मैं चलता हूं । अब आप भी जल्द अस्पताल से छुट्टी लेकर घर वापस आइए'–

कहते हुए प्रसाद जी अपने दोनों बेटियों के कंधों का सहारा लिए धीरे–धीरे अस्पताल के कमरे से बाहर निकल गये ।

शर्मा जी फीकी सी मुस्कुराहट के साथ उन्हें विदा किए और दरवाजे की ओर एकटक नजर गड़ाकर न जाने किस सोच में डूब गये ।

'अजी क्या सोच रहे हो आप ?'–सिरहाने पर खड़ी सुलोचना देवी ने पूछा।

शर्मा जी चुप रहे। उनकी नजरें अब भी दरवाजे पर टिकी थी ।

ओह! शायद सुलोचना देवी ने उनके मन के भाव पढ़ लिए।

'कल तक आपको भी छुट्टी मिल जाएगी अस्पताल से'– सुलोचना देवी धीरे से बोली।

शर्माजी अब भी चूप रहे।

'आज शाम को महेन्द्र और सुरेन्द्र दोनों यहाँ आकर डाक्टर साहब से आपकी छुट्टी के बारे में बात करेगा'–सुलोचना देवी बात को आगे बढ़ाती हुई बोली ।

'अब बस भी करो। अरे, हफ्ते भर से ज्यादा हो गये जिन्हें मेरी सुधि लेने की फूर्सत नहीं वे क्या कर लेंगे मुझे अस्पताल से छुट्टी दिलवाकर?'– शर्माजी उत्तेजित होकर बोले। फिर दो पल चुप होकर एक लम्बी सांस खींचते हुए पुनः बोले–'दरअसल गलती मेरी है सुलोचना।'

'अजी शांत हो जाइए, इस तरह उत्तेजित होने से आपकी तबियत पुनः बिगड़ जाएगी'– सुलोचना देवी बात को संभालते हुए धीरे से बोली, गलती मेरी है जो मैं अपने बेटों की परवरिश ठीक से नहीं की वर्ना आज आपको.....

नहीं, नहीं सुलोचना। गलती मुझसे हुई। तुमने तो इन दोनों नालायक बेटों के जन्म से पहले दो–दो बार अपनी कोख बचाने की भरपूर कोशिश की थी। तुमने न जाने कितने बार रो कर गिड़गिड़ाकर बार–बार मुझसे तुम्हारी कोख न गिरवाने की विनती की थी.....मगर मैंने तुम्हारी एक न सुनी और तुम्हें सीधे डाक्टर के पास लेकर चला गया। फिर वही हुआ जो मैं चाहता था।

आज उसी पाप का सजा मैं बेटों के बाप बनकर भुगत रहा हूं। आज अगर मेरी बेटियाँ होती तो मेरा जीवन खुशहाल हो जाता। मैं भी प्रसाद जी की तरह अपने बेटियों के कंधों का सहारा लेता लेकिन मैंने बेटियों को बोझ समझा और एक भाग्यवान पिता बनने का मौका खुद ही गंवा दी.....

शर्मा जी निढाल होकर बिस्तर पर पसर गये ।

साहसी मल्हाराव होलकर

डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम
स्वतंत्र लेखन
योग. प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ
(आयुर्वेद रत्न)
कानपुर नगर, उत्तर प्रदेश

बात उस समय की है जब दिल्ली का बादशाह औरंगजेब था। औरंगजेब अगर किसी की धाक मानता था, तो केवल मराठे की। उन दिनों साहूजी महाराज के मंत्री पेशवा बाजीराव थे। बाजीराव बड़े चतुर और पराक्रमी थे। उनकी वीरता, दूरदर्शिता और साहस से दिल्ली के बादशाह भी प्रभावित था।

औरंगजेब के शासन काल में मुगल सैनिकों ने महाराष्ट्र में लूटमार और दहशत मचा रखी थी। पांच–छः जत्थों में घोड़ों में सवार होकर मुगल सैनिक जब भी किसी गांव से होकर निकलते, तो किसानों की फसलें नष्ट कर देते। भेड़–बकरियों जो भी हाथ आतीं, उसे ले जाकर काटकर खा जाते। कहीं गरीब लोगों की झोपड़ियों को जला देते, तो कहीं गांव की लड़कियां ले जाते। मुगलों के इन जुल्मों और उपद्रवों से होल गांव की जनता भी त्रस्त थी।

एक दिन होल गांव के बाहर गड़ेरियों तथा चरवाहों के कुछ बालक अपनी भेड़–बकरियों तथा गाय–बैलों को चरा रहे थे। बालक एक–दूसरे पर मिट्टी के ढेले फेंक–फेंककर हुड़दंग मचा रहे थे। तभी अचानक एक बालक जोर से चिल्लाया। उसने जोर–जोर से चिल्लाकर सभी बच्चों का ध्यान नदी की तरफ उड़ रहे धूल के बादलों की ओर आकर्षित किया। धूल के बादलों को देखते ही उन्हें कुछ दिन पहले ही गांव में मुगल सैनिकों द्वारा किए गए अत्याचार, तबाही और दहशत का दृश्य याद आ गया।

सभी बच्चे डर गए और अपने–अपने पशुओं को हांकने लगे। तभी एक मल्हारी नाम के बारह–तेरह बर्षीय बालक ने उन्हें रोकते हुए कहा, 'डरते क्यों हो? आज हम सब मिलकर उनका मुकाबला करेंगे।' सभी बच्चे पहले से ही मुगलों के आतंक से भयभीत थे, इसलिए कोई भी मल्हारी की बात मानने को तैयार नहीं था।

सभी बच्चे गांव की ओर चलने लगे, तो मल्हारी क्रोध में आकर बोला–''तुम कायर हो। जाओ घर जाकर चूड़ियां पहन लो।'' सभी बच्चे जाते–जाते उसे कह रहे थे–''अरे मल्हारी !

तुम भी आ जाओ नहीं तो वे तुम्हें पकड़कर ले जाएंगे।''

''मैने अपनी मां का दूध पिया है तुम्हारी तरह कायर नहीं हूं।'' मल्हारी ने वहीं खड़े-खड़े आवेग में आकर जवाब दिया।

सभी बच्चे चले गए लेकिन मल्हारी उसी पेड़ की ओट में खड़ा रहा। तभी अचानक चार-पांच घुड़सवार उसके सामने से निकले। सबसे आगे उनका सरदार था। उसके सिर पर पगड़ी थी तथा उस पर मोती का तुर्रा लगा था। मल्हारी ने एक बड़ा-सा मिट्टी का ढेला अपने दोनों हाथों से पकड़ रखा था। ज्यों ही सरदार उसके सामने से निकला, उसने दोनों हाथों से पूरे जोर से वह मिट्टी का ढेला सरदार के मुंह पर निशाना साध कर मारा।

अचानक मुंह पर इतने जोर से ढेला आकर लगते ही सरदार सकते में आ गया। घोड़ा भी हिनहिनाया। सरदार ने लगाम खींची और घोड़े से उतर गया। सरदार के साथ ही उसके साथी सवार भी उतर गए। सरदार ने अपना हाथ बार-बार अपने गाल पर फेरा तथा चारों ओर आस-पास देखा। उसे एक बच्चा गांव की तरफ भागता हुआ दिखाई दिया। सरदार ने अपने साथियों से कहा कि आज रात हम अपने तम्बू इसी गांव में लगाएंगे।

उन दिनों महाराष्ट्र में दशहरे के शुभ मुहूर्त पर मुहिम पर जाने की प्रथा प्रचलित थी। बाजीराव पेशवा भी उस दिन खान देश की मुहिम पर निकले थे। उस दिन बाजीराव भी अपने चार-पांच साथियों के साथ उधर से गुजर रहे थे।

पेशवा का मुंह सूज गया था। उन्होंने अपने साथियों से कहा कि गांव में से तलाश करो और बच्चे को लाओ जिसने मिट्टी का ढेला फेंका था।

मल्हारी वहां से भागा, तो सीधे अपने घर पहुंचा। मां ने पूछा, ''बेटा, सब बच्चे तो पहले ही आ गए, तू कहां रह गया था?''

''मां, मैंने आज उसे खूब मजा चखाया।'' मल्हारी ने बेड़े गर्व से अपनी मां को सारी घटना सुनाई।

मल्हारी के पिता का स्वर्गवास हो चुका था तथा उसकी मां उसको लेकर अपने भाई के यहां रह रही थी। मां अपने बच्चे के उत्पात को सुनकर डर गई और घबराकर रोने लगी। इतने में ''दो घुड़सवार बालकों के झुंड के साथ ही मल्हारी की झोपड़ी की ओर आते दिखाई दिए।'' मां ने घबराकर मल्हारी को पीछे छिपाना चाहा लेकिन वह तो और आगे बढ़कर आया और बोला –''क्यों मिट्टी के ढेले से पेट नहीं भरा था।''

मां ने बढ़कर मल्हारी को पकड़ा। घुड़सवारों ने कहा–''माई हमारे सरदार ने इस बालक को बुलाया है।'' मां यह सुनते ही जोर-जोर से रोने लगी।

मल्हारी ने मां से हाथ छुड़ाया और कहा, ''हां तो चलता हूं, मैं डरता हूं क्या?'

आगे-आगे घुड़सवार, साथ में मल्हारी तथा उसके पीछे गांव के बच्चे, बूढ़े तथा स्त्री-पुरुष चल पड़े। मां रोती-चिल्लाती जा रही थी।

तम्बू के सामने सारी भीड़ खड़ी हो गई। तम्बू में एक गद्दी बिछी थी, उस पर तकिए के सहारे सरदार बैठे थे। वे हाथ से अपना गाल सहला रहे थे तथा ईंटों को गरम करके सेंकते जा रहे थे। बालक मल्हारी बिना झिझक सरदार के सामने जाकर खड़ा हो गया और उनके मुंह की ओर देखने लगा। पेशवा बालक की निडरता को बड़े गौर से देख रहे थे। ''तुमने मिट्टी का ढेला मारा?''

''हां''

''क्यों''

''तुम लोग बार-बार हमारे गांव में आकर हमारी भेड़-बकरियों को लूट कर ले जाते हो। हमारी फसल जला डालते हो। हमें परेशान करते हो, इसलिए।''

बालक का निर्भीक उत्तर सुनकर सरदार सकते में आ गया। उन्होंने कहा, ''तुम बड़े बहादुर लड़के हो। तुमने बहुत अच्छा किया। लेकिन तुम्हारे ढेला मारने से मेरा गाल सूज गया जबकि मैंने तुम्हारे गांव का कुछ नहीं बिगड़ा था।''

मल्हारी ने कहा, ''तुम्हारी तरह ही सभी लोग घोड़े पर आते हैं और लूट-मारकर चले जाते हैं।''

बालक की प्रखरता और साहस को देखकर पेशवा बहुत खुश हुए। उन्होंने बालक की मां तथा मामा को बुलाकर कहा, ''आप इस बालक को हमारे हवाले कर दो। मां और मामा दोनों ही हाथ जोड़कर बालक के अपराध की क्षमा मांगने लगे।

पेशवा ने उन्हें समझाया, उनका बालक बड़ा होनहार है। वह बहुत बड़ा बहादुर सिपाही बनेगा। इसलिए वे इसे अपने साथ छत्रपति साहू महाराज की छत्रछाया में ले जाना चाहते हैं।

मल्हारी को जब पता चला कि उसने जिस सरदार को ढेला मारा था, वह और कोई नहीं बाजीराव पेशवा हैं, तो वह खुशी से उछल पड़ा, साथ ही सहम गया कि उसने कैसा दुस्साहस किया। आगे चलकर यह बालक बहुत बड़ा पराक्रमी तथा शूर सेनापति बना जिसे महाराष्ट्र के इतिहास में मल्हाराव होलकर के नाम से जाना जाता हे। मराठों के इतिहास में मल्हाराव होलकर के शौर्य और पराक्रम की कई कथाएं हैं।

साहसी मल्हारराव होलकर

नवरात्र और नौनिहाल

सुश्री इंदु सिंह 'इंदुश्री'
स्वतंत्र लेखन
नरसिंहपुर, मध्य प्रदेश

हर व्रत और उपवास के साथ आहार की व्यवस्था का उद्देश्य समझना कठिन नहीं कि ऋतु परिवर्तन के साथ ही हमारे यहां भोजन भी बदल जाता पर, शरीर सीधे ही इस परिवर्तन के लिए तैयार नहीं हो पाता तो हर तीसरे महीने में एक नवरात्र आती जिसके द्वारा हम अपने तन–मन को संयम के साथ नये मौसम के अनुसार आसानी से बदल सकते हैं। हमारे पूर्वजों ने शरीर के विषैले तत्वों को बाहर निकालने की सनातनी व्यवस्था इस तरह से बनाई कि जो इनका पालन करते वह सदैव निरोगी व स्वस्थ रहते क्योंकि, वह ऋतुचर्या को अपनाते जिसमें सोने–जागने से लेकर खाने–पीने तक के नियमों को निर्धारित किया गया है। चूंकि, आधुनिक समय में हमने अपने कुतर्कों के द्वारा उस प्राचीन जीवन शैली को नकारना शुरू कर दिया जिसका खामियाजा भी हमें ही भुगतना पड़ रहा है। हम आज हंसकर कह देते कि पुराने समय में न लाइट्स थी, न मोबाइल, न टेक्नोलॉजी और न ही सुख–सुविधा के इतने साधन व गैजेट्स इसलिए वह लोग बोरिंग लाइफ जीते थे। वे मजबूरी में जल्दी उठते व जल्दी सोते लेकिन, अब हमारे पास तो सब कुछ फिर क्यों हम उनका अनुकरण करें तो इन दलीलों के साथ हमने अपनी लाइफ स्टाइल बदल ली जिसके साथ हमारा सब कुछ ऐसा बदला कि जिन बीमारियों या परेशानियों के नाम तक तब कोई न जानता था आज नन्हे–मुन्ने बच्चे तक उनसे जूझ रहे हैं।

आज बच्चा पैदा होते ही मोबाइल चलाना जानता और जो न भी जाने तो हम ही उसे बहलाने व खुद को बचाने उसके नन्हे हाथों में वह सौंप देते अपने स्वार्थ के लिए हम जब एक बार उसको यह यंत्र थमा देते तो फिर उससे उसको मुक्त करना आसान नहीं होता क्योंकि, हम खुद भी तो उससे ही बंधे तो जब खुद ही कैदी तो उसे किस तरह आजाद करा सकते

हैं। आज मोबाइल ने बच्चों के जीवन पर सकारात्मक से ज्यादा नकारात्मक प्रभाव डाला जिसकी वजह से अब छोटे–छोटे बच्चे पैदा होते ही रील्स व शार्ट वीडियो में नजर आ रहे हैं। जहां कभी नवजात शिशुओं, नई–नवेली व गर्भवती बहु को सबसे बचाकर रखा जाता था जिसके अपने अनेक कारण जिन्हें अवैज्ञानिक करार देकर आज हर किसी के सामने उसे प्रस्तुत किया जा रहा है। हमने हर पुरातन रीति–रिवाज को ढकोसला या अमान्य करार देकर छोड़ दिया या अपनी सुविधा के अनुसार उनमें परिवर्तन कर दिया यहां तक कि सोलह संस्कार भी दिखावे के रह गए हैं। शादियां तो नौटंकी बन गई जिसके साथ ही प्रेग्नेंसी को भी इवेंट में तब्दील कर उसका भी दिखावा किया जाने लगा इसी रफ्तार से चलते रहे तो पता नहीं आगे क्या–क्या सामने आएगा। हर किसी को कुछ हटकर, कुछ अलग या नया करने की चाहत जिसके चलते वह समाज के प्रचलित मापदंडों को तोड़ना प्रगतिशीलता का आवश्यक अंग समझता तो खुद पर मॉडर्न का लेबल लगाने किसी भी हद तक जा सकता है।

ऐसे में अब तीज–त्यौहारो पर भी इवेंट की तरह उनका आयोजन किया जाता जो तब अच्छा यदि उससे नई पीढ़ी को कोई संदेश दिया जा रहा हो या अपनी परम्पराएं उसे हस्तांतरित की जा रही पर, केवल गेदरिंग के लिए ऐसा किया जाना हमारी संस्कृति में इतनी मिलावट कर रहा कि आगे आने वाले समय की जनरेशन इतने सारे वेरिएशन देखकर दिग्भ्रमित हो जाएगी जो हमारे ही कल्चर के लिए खतरा है। अभी चौत्र नवरात्र आ रही जो कि हमारा नूतन वर्ष भी उसमें ही हम अपने नौनिहालों को जोड़कर सही जानकारी देने के साथ–साथ अपनी देह के लिए भी नवाचार करें सात्विक भोजन से उसे डिटॉक्स करें। बच्चों को पूजा–पाठ, यज्ञ, आरती व हर विधान का महत्व बताएं अन्यथा कल वह गूगल में देखकर भी सही से कुछ न जान सकेंगे कि जब तक आपको पूर्व से कोई ज्ञान नहीं गूगल आपको भटका सकता है। रील्स भी बनानी है तो घटिया व फूहड़ गीतों की जगह भजन, प्रार्थना, धार्मिक मंत्र, श्लोक या किसी आरती की बनाये जिससे कि उसका प्रचार हो यह तकनीक का सही इस्तेमाल हो सकता है। इसके जरिये हम अपनी सभ्यता व संस्कृति को वैश्विक पटल पर विस्तार दें क्योंकि, पता नहीं दुनिया के किस कोने में बैठा कोई व्यक्ति इसे देखकर आकृष्ट होकर अपनी संतान को ऐसा बनाना चाहे न कि आप उनकी नकल कर अपने बच्चे को नमूना बना दे। जिससे तात्कालिक थोड़ा नाम या पैसा तो मिल सकता परन्तु, दीर्घकाल में यह नशा उसके लिए जहर बन जायेगा जो उसके भविष्य को निगल सकता है तो इस नवरात्रि पर नौनिहालों से पूजा करवाएं और छोटे–छोटे मन्त्र आदि पढवाये एक बार आप उन्हें धर्म से जोड़ दें बाकी सब कुछ स्वतः हो जाएगा। न जाने कितने सालों से पूजा के पश्चात हम सब हम बदलेंगे युग बदलेगा, हम सुधरेंगे युग सुधरेगा कह रहे पर, क्या वाकई हम उसे अपने जीवन में उतर रहे सोचने की आवश्यकता है।

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन की मासिक ई–पत्रिका

क्या आपकी लेखन में अभिरुचि है?
क्या आप भी कभी अपने विचारों, भावनाओं को व्यक्त करने के लिए कागज– कलम उठाते हैं?
क्या आप लेखक/लेखिका, कवि/कवियत्री है?

आपको **अध्यात्म संदेश** ई पत्रिका की ओर से आमंत्रण है, आप अपनी रचनाएं, कविताएं, गीत, लघु कथाएं हमें प्रेषित करें। आपकी रचनाएं आलेख प्रकाशन योग्य होने पर उसका पत्रिका में अवश्य प्रकाशन किया जाएगा।

अपनी रचनायें हमें प्रेषित करते समय यह अवश्य सुनिश्चित करें कि यह रचना आपकी अपनी मौलिक कृति है और न तो यह किसी पत्र – पत्रिका – पुस्तक – ब्लॉग – वेबसाइट आदि में प्रकाशनार्थ विचाराधीन है और न ही कभी प्रकाशित हुई है।

आपकी रचना को मूल रूप में प्रकाशित/संपादित रूप में प्रकाशित करने अथवा प्रकाशित न करने का पूर्ण विवेकाधिकार संपादक मंडल का है।

आलेख भेजने की अंतिम तिथि 15 मार्च 2023

विशेष : शब्द सीमा 500–750 शब्दों के मध्य होनी चाहिए

1. लेखक/लेखिका अपनी रचना यूनिकोड/कृतिदेव – वर्ड फाइल में टाइप कराकर ही भेंजे। पी. डी. एफ फाइल न भेजें।
2. लेखक/लेखिका अपनी स्वरचित अप्रकाशित एवं मौलिक रचना के साथ कृपया अपना संक्षिप्त परिचय, व्हाट्सप नंबर, फोटो के साथ भेजें ।
3. आपकी स्वीकृत रचना आपके फोटो के साथ प्रकाशित की जायेगी। प्रकाशित रचना पर पारिश्रमिक देय नहीं है।
4. जनकल्याण हित में ज्ञान वर्धन हेतु यह पूर्णतः निः शुल्क है। आपकी रचनाएँ ई–मेलः **editor.adhyatmsandesh@gmail.com** पर प्रेषित करें।

– योगी शिवनन्दन नाथ
प्रधान संपादक

प्रकृति, मनुष्य और हमारा चिन्तन

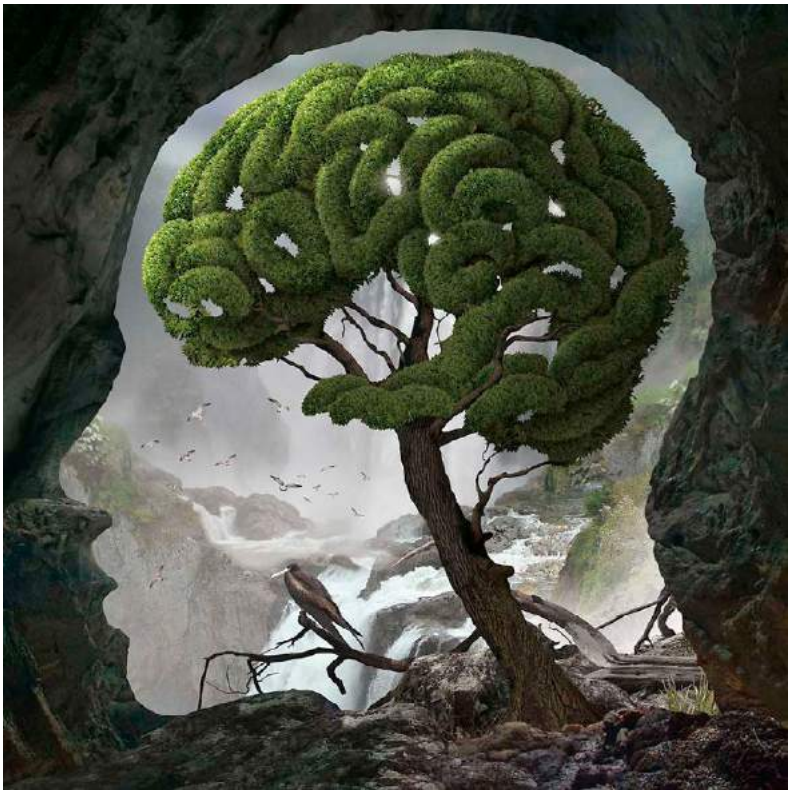

विजय कुमार तिवारी
(कवि,लेखक,कहानीकार,
उपन्यासकार,समीक्षक)
भुवनेश्वर,उड़ीसा

देश–दुनिया में घटनाक्रम बहुत तेजी से घट रहे हैं,नित्य बदलाव हो रहा है, लोगों को लगता है,शायद दुनिया अब रहने लायक नहीं रह जायेगी और देखते–देखते सब कुछ नष्ट हो जायेगा। लोगों को सांस लेने में परेशानी है,जीने में परेशानी है और कहीं भी सुकून नहीं मिलता। जो अभी–अभी जन्मे हैं या जिन्होंने 10–15 वर्षों की जिन्दगी जी ली है,जिन्हें तपती हवाओं की अनुभूति या समझ नहीं है,उनसे कहना चाहता हूँ, निराश होने या भयभीत होने की जरुरत नहीं है। यह दुनिया, पृथ्वी, आकाश और हमारा संसार निराला है, सुन्दर है, खुशबू से सराबोर है और सबसे बड़ी बात कि इससे बेहतर कहीं कुछ है ही नहीं। जिन्हें संघर्ष करना पड़ रहा है, विरोध झेल रहे हैं, उनसे कहना है, इसके बाद ही तुम्हें सृष्टि का बेहतरीन अनुभव होने वाला है,अपना संघर्ष और प्रयास जारी रखो। जो वरिष्ठ हैं, उनसे बस इतना ही कहना है, सच बोलो, दुनिया को सच बताओ, लोगों में भय पैदा मत करो, जितना जान चुके हो, कम से उतना तो जरुर बताओ। हम जानते हैं,तुम भी समझते हो, यदि अभी तक जीवित हो, इसका मतलब है कि तुम्हें कोई मारने वाला नहीं है। मेरा तो मानना है, कोई किसी को मारना नहीं चाहता, हम स्वयं कहीं न कहीं जिम्मेदार होते हैं।

हमने दुनिया को बांट लिया है और प्रभुत्व के लिए लड़ रहे हैं। हमने समाज में बंटवारा किया है और एक– दूसरे के सामने खड़े हो गये हैं। हमने सभ्यता– संस्कृति विकसित की है परन्तु उसके अनुसार जीना नहीं चाहते। हमारी प्रवृत्तियाँ ऐसी नहीं होनी चाहिए। हम सब कुछ मनमानेपन की ललक में तोड़ते जाते हैं। आश्चर्य नहीं होता, जो दिन रात झूठ परोस रहे हैं,वे सत्य को हम सबसे अधिक जानते हैं। जो जान रहा है,सर्वाधिक खतरा उसी से है। वह लगा हुआ है,लोग सच को ना जान पाएं। वह भूल जाता है कि सच दिखाने, बताने वाली भी कोई शक्ति है,कोई व्यवस्था है,देर–सवेर बतायेगी ही दुनिया का सच, हमारा– आपका सच और उन लोगों का भी जो लगातार बरगलाने में लगे हैं, झूठ परोसने में लगे हैं।

जिस मिट्टी में हमारा जन्म हुआ है, हमारा सम्पूर्ण सच यहीं का है। बाहर का पौधा तभी पनप सकता है,यदि सम्पूर्ण सामंजस्य की संभावना हो। उसे ही बदलना होगा अन्यथा उसके मिट जाने की पूरी संभावना है। दुनिया तुम्हें तभी स्वीकार करेगी, जब तुम सच के साथ हो। हमारी सभ्यता–संस्कृति इसलिए टिकी हुई है कि उसमें सच भरा हुआ है। जो भी सच के साथ होगा,दुनिया में उसका अस्तित्व बना रहेगा।

एक दौर होता है, कोई झूठ फलने–फूलने लगता है, उसकी आँधी चलती है, बहुत कुछ भ्रमित होता है, नष्ट और खंडित–विखंडित होता है। विश्वास करो, सच पुनः उभरता है, करवटें लेता है और उसकी अँगड़ाई में झूठ सदा के लिए कटघरे में डाल दिया जाता है। सच के साथ रहने की अपनी गरिमा है,गौरव है और उसी में जीवन का पुरुषार्थ है। जो सच के साथ है,उसी का इतिहास लिखा जाता है,उसी का मूल्यांकन और सम्मान होता है। देख सको तो देख लो, आज उन्हें, उन महापुरुषों को सम्मान मिल रहा है जिन्हें किन्हीं काल–खण्ड में पीछे ढकेला गया, जिनकी सच्चाई को छिपाया गया या पूरी तरह मिटा देने की कोशिशें हुई। आज उनकी आभा,उनका आलोक सच के साथ उभर रहा है। कोई रोक पाने की स्थिति में नहीं है। दूसरी ओर उनका झूठ सामने आ रहा है, उनकी छवि धूमिल हो रही है और इतिहास में खलनायक बनते जा रहे हैं जिन्होंने सच को झुठलाने की कोशिशें की हैं। यह सच और झूठ की प्रवृत्तियों का चमत्कार है। तय तो तुम्हें ही करना है कि किसके साथ हो–सच के या झूठ के।

आज इतिहास ने उन्हें उनका सम्मान दिया है। देख लो,वे महापुरुष आज अपने विराट स्वरुप में आसमान के सितारे की तरह चमक उठे हैं। तुम बौने हो चुके हो,खलनायक की भूमिका में हो और इतिहास ही तुम्हें दण्डित कर रहा है। याद रखो, इतिहास हमेशा सच के साथ होता है। इतिहास वह नहीं जो किसी काल–खण्ड में दस्तावेजों में चाटुकारों द्वारा लिखवा लिया गया है। इतिहास लोगों की चेतना में दर्ज रहता है, सभ्यता–संस्कृति का हिस्सा होता है और जिसका आलोक उभरता ही उभरता है। आज वही दौर है।

दुर्भाग्य है, आज भी तुम सच को नकारने की कोशिश में हो और नंगे होते जा रहे हो। तुम्हारे भीतर का झूठ इस कदर है कि तुम चाह कर भी सच पहचान नहीं पाते। यह मानव स्वभाव भी है और तुम्हारी प्रवृत्ति वैसी ही बन गयी है। तुम्हारा उठाया हुआ हर कदम तुम्हें नीचे गिरा रहा है। इतिहास का हथौड़ा चल पड़ा है और इसकी सक्रियता तब तक बनी रहेगी जब तक तुम्हें नेस्तनाबूद न कर दे। तुम्हारे झूठ की सारी इमारतें धराशाई होने वाली हैं और सच बुलंद हो रहा है।

किसी की उचित भूख के लिए कितना चाहिए? तुमने करोड़ों के हिस्से का हजम किया है। प्रकृति सबके लिए देती है,किसी एक के लिए नहीं। प्रकृति संतुलन करती है और इसके लिए वह किसी की परवाह नहीं करती। उसका तो समूल नाश करती है जो उसकी व्यवस्था को चुनौती देता है। हमारे चिन्तन में ईश्वर को सर्वशक्तिमान माना गया है। मनुष्य उसका प्रतिनिधि है। मनुष्य से ईश्वर की अपेक्षाएं हैं कि वह पृथ्वी को, प्रकृति को, धरती, आकाश, वातावरण को प्राणियों के रहने लायक, जीने लायक बनाए। इसके लिए ईश्वर ने मनुष्य को विवेक शक्ति दी है, ज्ञान, चेतना और सामर्थ्य दिया है। मनुष्य उसका दुरुपयोग करने लगा है, ईश्वरीय व्यवस्था को नष्ट करने लगा है और चुनौती देने लगा है।

इतिहास गवाह है, प्रकृति ने अनेकों बार मनुष्य को समझाया है और सावधान किया है। प्रकृति ने तांडव मचाया है और संतुलित करने का प्रयास किया है। ब्रह्माण्ड की, प्रकृति की, पृथ्वी की अपनी नियामक शक्तियाँ है,उन्हें चुनौती देना मनुष्य के बस में नहीं। मनुष्य को उससे तालमेल बिठाकर चलना चाहिए। प्रलय की संकल्पना हमारे सनातन ग्रंथों में है। प्रकृति की लीला हम आज भी देख रहे हैं और मनुष्य की लाचारी भी। एक भयावह विचारधारा यह भी है, प्रकृति संतुलन के लिए किसी योनि, किसी जीव या किसी संरचना को स्थायी तौर पर समूल नष्ट कर देती है। विद्वानों ने स्वीकार किया है, जिस दिन प्रकृति मनुष्य से, उसके कर्मों और विचारों से रुष्ट हो जायेगी, मनुष्य को समूल नष्ट करने में जरा भी नहीं हिचकेगी।

रामहि केवल प्रेम प्यारा

डॉ. सन्तोष खन्ना
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
वरिष्ठ साहित्यकार एवं प्रधान संपादक :
महिला विधि भारती त्रैमासिक पत्रिका
दिल्ली–110088

श्रीमद्भागवत गीता के चोथे अध्याय में श्लोक 7 और 8 में भगवान श्री कृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हुए बताते हैं कि जब जब धर्म की हानि होने लगती है तो उस समय साधु संतों की रक्षा के लिए और दुष्टों के विनाश के लिए वे मृत्यु लोक में अवतार लेते हैं। वह श्लोक तो सब ने सुना ही होगा जो इस प्रकार है :–

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत अभ्युत्धानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् धर्मसंस्थापनार्थाय संभ्भवामि युगे युगे।।

तुलसीदास ने भी अपने रामचरित मानस में इसी भाव को निम्नवत् अभिव्यक्त किया है :–

'जब –जब होई धरम की हानी,बाढ़हि असुर अधम अभिमानी, तब–तब धरि प्रभु विविध शरीरा, हरहि दयानिधि सज्जन पीरा।'

अर्थात जब–जब पृथ्वी पर धर्म की हानि होती है, दुष्टों का प्रभाव बढ़ने लगता है, तब सज्जनों की पीड़ा हरने के लिए प्रभु का अवतार होता है।

बालकाण्ड में भगवान शिव माता पार्वती को राम कथा सुनाते हुए कहते हैं कि प्रभु जन जन के कष्ट निवारण के लिखे पृथ्वी पर अवतार लेते हैं।

त्रेता युग में रावण के अत्याचारों को समाप्त करने तथा धर्म की पुनः स्थापना के लिए भगवान विष्णु ने मृत्युलोक में श्री राम के रूप में अवतार लिया। श्री राम जी का जन्म त्रेता युग में चौत्र शुक्ल की नवमी के दिन पुनर्वसु नक्षत्र और कर्क लग्न में हुआ। भारत में ही क्या, लगभग समूचे विश्व में भगवान राम न केवल हमारे आराध्य हैं अपितु वे हमारी संस्कृति के प्रतीक हैं। इसलिए ही हम सदियों से संपूर्ण भारत में रामनवमी का त्यौहार पूरी आस्था और श्रद्धा से मनाते आ रहे हैं। इस वर्ष राम नवमी 30 मार्च, 2023 को होगी जब पूरे भारत वर्ष में ही नहीं, बल्कि विदेश में भी कई स्थानों पर यह पर्व मनाया जाएगा।

कबीर साहब ने भी राम के दो रूप माने हैं।
एक राम दशरथ का बेटा
एक राम घट घट में बैठा
एक राम का सकल उजियारा
एक राम जगत से न्यारा।

अर्थात् एक राम अविनाशी परमात्मा है जो सबका सृजनहार व पालनहार है। एक राम दशरथ नंदन है जो मर्यादा पुरुषोत्तम राम है जिसने पृथ्वी को राक्षसों से विहीन कर सबकी रक्षा की। रामनवमी के दिन ही चौत्र नवरात्रि के समाप्ति भी हो जाती है।

महाकवि तुलसीदास ने रामचरितमानस में राम और सीता का ऐसा अनोखा चरित्र चित्रण है कि उसमें विश्वजनीन सभी मर्यादाओं और मूल्यों का समावेश है। राम आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श पति और आदर्श राजा के साथ आदर्श दुश्मन भी हैं। तुलसी के राम मर्यादा पुरुषोत्तम हैं तो वह निर्गुण और सगुण, निराकार और साकार, अव्यक्त और व्यक्त, अंतर्यामी और बहिर्यामी, गुणातीत और गुणश्रय हैं। स्वरुप की दृष्टि से जीव और ईश्वर में अभेद है अतः वह ईश्वर की भांति ही सत्य, चेतन और आनंद में है इसीलिए राम के चरित्र के संदर्भ में ही कहा गया है कि रामकथा भारत की आदि कथा है जिसे भारतीय संस्कृति का रूपक कहा जा सकता है इसलिए यहां सभी पात्र भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों को महिमा प्रदान करते दिखाई देते हैं।

भगवान राम हमारे आदर्श पुरुष इसलिए भी हैं कि वह केवल प्रेम का साकार रूप हैं। वह सबसे प्रेम करते हैं। उन्हें केवल प्रेम चाहिए। अगर हमें राम को प्राप्त करना है उनके प्रति हमारा निश्चल प्रेम ही सहायक होगा। उनको चाहे हम छप्पन भोग लगाएं या उन पर चंदन का लेप करें, उन्हें तो निश्चल प्रेम से ही प्राप्त किया जा सकता है। शबरी ने उन्हें निश्चल भाव से झूठे बेर अर्पित कर उनका स्नेह प्राप्त कर लिया था। हनुमान ने उन्हें अपनी अनन्य सेवा और समर्पण से प्राप्त कर लिया था।

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम के मन में सभी के लिए प्रेम का भाव रहता है। किसी के लिए भी उनके मन में दुर्भावना नहीं है। महाराजा दशरथ उन्हें अपने ज्येष्ठ पुत्र के रूप में साम्राज्य सौंपना चाहते हैं और इसके लिए उनका राजतिलक करना चाहते हैं। जब उन्होंने राम के राजतिलक की घोषणा की, उनकी इस घोषणा से अयोध्या की समूची प्रजा प्रसन्न हो उत्सव मना रही हैं। जब राम बुलावा आने पर कैकेई माता के भवन में पंहुचते हैं तो अपने पिताश्री की स्थिति को देख मां से इसका कारण पूछते हैं। जब कैकेई उन्हें बताती है कि उसने महाराज द्वारा दिये गये दो वर के बदले में भरत के लिए राज्य और राम के लिए चौदह वर्ष का बनवास मांग लिया तो राजा की राम के प्रति स्नेहवश यह हालत हो गई है तो राम जी के मन में क्षण भर के लिए भी कोई विषाद या मालिन्य नहीं आता जबकि इससे पहले तो वे अयोध्या में हमेशा एक राजकुमार की तरह सुखमय जीवन जी रहे होते हैं और उनका कभी दुःख और कठिनाइयों से कभी पाला नहीं पड़ा होता। जब उन्हें बनवास जाने का पता चलता है वह कह उठते हैं :

'सुनु जननी सोई सुतु बड़भागी। जो पितु मातु बचन अनुरागी।
तनय मातु पितु तोषनिहारा। दुर्लभ जननी सकल संसारा।।'

राम कहते हैं हे मां, वह पुत्र बड़ा ही भाग्यशाली हैं जिसे अपने माता–पिता के वचनों का पालन करने का सुअवसर मिलता है। यह तो बहुत अच्छा है कि बन में जाने से उन्हें ;षि मुनियों से मिलने का अवसर प्राप्त होगा और प्रिय भाई भरत को राजगद्दी मिलेगी। ऐसा लगता है मुझसे कोई बड़ा अपराध हो गया है जो पिताश्री की यह हालत हो गई है। कैकेई जब अपनी बात दोहराती है तो राम बनवास जाने के लिए अपनी मां कौशल्या को विदा कहने के लिए जाते हैं।

राम वन गमन की बात जानकर मां कौशल्या की पीड़ा अत्यंत द्रवीभूत होती है, उनके शरीर की नाड़ियां निष्प्राण होने लगती हैं। मां का पुत्र के प्रति यह कैसा प्रेम, जहां राम का वनगमन मां कौशल्या के जीवन की सारी आशाएं क्षीण हो रही थीं, वहां सिर्फ पुत्र के प्रेम की ही अभिलाषा है कि वह अपनी मनोव्यथा से उबरने के लिए स्वयं को स्वयं ही समझाने का अनुरोध करती है। यह प्रसंग मानस की करुण व्यथा का सशक्त उदाहरण है। मां का पुत्र के प्रति कर्तव्य की अनन्य अभिव्यक्ति इस दोहे से परिलक्षित होती है, जब मां बार–बार दुःख से कातर हो रही है, तब भगवान राम उनको हृदय से लगाते हैं– **'राम उठाई मातु उर लाई।'**

भगवान राम अपने छोटे भाई लक्ष्मण को भी समझाते हैं– हे भाई, इस जगत में माता– पिता की सेवा से बढ़कर कोई धर्म नहीं है। तुम यहीं रहकर उनकी सेवा करो, लेकिन अंततः वे राम के ही साथ हो लिए। उसके बाद सीता भी राम के साथ वन गमन का निश्चय कर लेती है। माता कैकेयी का भी अपनी पुत्रों से प्रेम अथाह है, तभी तो राम जब अयोध्या लौटते हैं तो सबसे पहले माता कैकेयी के भवन मे जाते हैं।

आज जब माता–पिता संतान की उपेक्षा का शिकार हो रहे हैं या वृद्धा आश्रम में रहने के लिए मजबूर हैं, तब रामचरित मानस का यह विलक्षण प्रेम सतत प्रेम का मार्ग जरूर प्रशस्त करेगा। बुजुर्गों के दुरुह जीवन के इस संत्रास से मुक्ति के लिए ये पद अनिवार्य हो उठते हैं।

भगवान राम लक्ष्मण और सीता तीनों वन को प्रस्थान के लिए निकलते हैं तो अयोध्या की पूरी प्रजा प्रेम के वशीभूत हो उनके पीछे पीछे चलने लगती है जिससे राम बहुत अभिभूत हो सुमंत को कहते हैं कि वह प्रयत्न कर समझा बुझाकर कर सबको अपने घरों को लौटाने की व्यवस्था करें। अंततः निषाद उन्हें अपनी नौका में बिठा कर नदी पार करवाता है। तुलसीदास ने इस प्रसंग के माध्यम से निषाद प्रेम और भक्ति के प्रसंग का अत्यंत सुंदर, प्रेरक और रोचक ढंग से वर्णन किया है।

वन में पहुंच राम लक्ष्मण और सीता कई ऋषि मुनियों के आश्रमों में जा कर उनसे भेंट करते हैं। यह सम्पूर्ण यात्रा वह पैदल करते हैं। वे उस समय के राजा महाराजाओं से कोई सहायता नहीं लेते। उनसे तो वे तब भी सहायता नहीं लेते जब रावण सीता का हरण कर लेता है। तब राम अपने बलबूते पर वानर सेना का गठन करते हैं। इस दौरान बाली प्रसंग अवश्य आता है और मृत्यु शैय्या पर लेटा बाली राम से पूछता है कि आपका अवतार तो धर्म की संस्थापना के लिए हुआ है फिर आपने मुझे व्याध की भांति क्यों मारा? आपको सुग्रीव कैसे प्यार हो गया और मुझे आपने अपना दुश्मन कैसे मान लिया। उसका क्या अपराध था जो उन्होंने उसको मारा है तो राम उसे जो उत्तर देते हैं उससे पता चलता है कि उन्होंने यह कृत्य धर्म की संस्थापना के लिये ही किया है क्योंकि

बाली ने अपने छोटे भाई की पत्नी को उससे छीन लिया जबकि छोटे भाई की पत्नी, बहिन और बेटे की पत्नी तो अपनी बेटी के समान होती हैं, इन पर कुदृष्टि डालने से अधिक कोई और पाप नहीं होता, तुमने जो पाप किया है, उसके कारण यह सब हुआ है।

धर्म हेतु अवतरेहु गोसाई। मारेहु मोहि ब्याध की नाई।।
मैं बैरी सुग्रीव पिआरा। अवगुन कबन नाथ मोहि मारा।।
अनुज बधू भगिनी सुत नारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी।।
इन्हहि कुदृष्टि बिलोकइ जोई। ताहि बधें कछु पाप न होई।।

भगवान राम का सीता के प्रति और सीता का राम के प्रति अगाध प्रेम है, इसलिए सीता राम के साथ वनवास में रहने आ गई जबकि भगवान राम ने उन्हें कई प्रकार से समझाया था कि वह उनके साथ बन में न आए। सीता के रावण के द्वारा अपहरण से पहले ही भगवान राम सीता को अग्नि देव को सौंप देते हैं अर्थात् उन्हें सुरक्षा के घेरे में सुरक्षित कर लेते हैं, इस प्रकार जिस सीता का रावण अपहरण करता है वह वास्तविक सीता न हो कर उसकी छाया होती है। इसी संदर्भ में सीता की अग्नि परीक्षा को समझा जा सकता है हालांकि सीता की इस अग्नि परीक्षा के कारण भगवान राम और कवि की काफी आलोचना होती है। सीता को अग्नि देव की सुरक्षा के प्रसंग में यह जरूरी हो जाता है कि जब सीता को रावण की कैद से मुक्त करवा लिया जाता है तो राम असली सीता को अग्निदेव के सुरक्षा चक्र से वापस लें। इसके लिए ही अग्नि परीक्षा के प्रसंग की रचना की गई है। इस अग्नि परीक्षा के माध्यम से राम ने एक बार पुनः प्रेम के महत्व को दर्शाने का प्रयास किया है। इस संदर्भ में अगर हम उर्दू के हरदिल अजीज शायर मिर्जा गालिब के एक शेर को यहां उद्धृत करें तो हम अपनी बात को अच्छी तरह से स्पष्ट कर पायेंगे। मिर्जा गालिब कहते हैं :-

'यह इश्क नहीं आसां, बस इतना समझ लीजे,
इक आग का दरिया है और डूब के जाना है।'

अर्थात् अपने प्रेम को पानी के लिए आग के दरिया में से डूब के जाना है।

भगवान राम लंका युद्ध से पहले युद्ध टालने का भरसक प्रयास करते हैं क्योंकि वे यह स्थापित करना चाहते हैं, युद्ध में बहुत विनाश होता है अतः उसे अंतिम विकल्प की तरह ही चुनना चाहिए। इसके लिए अंगद को रावण के दरबार में शांति दूत के रुप में भेजा जाता है। अंततः श्री राम की लंका पर विजय होती है परंतु राम लंका का राजा विभीषण को बना देते हैं। वे अपने शत्रु रावण का भी सम्मान करते हैं और रावण से सीख के लिए लक्ष्मण को भेजते हैं।

समूची रामचरित मानस में राम के चरित्र को अत्यधिक उदात्त रुप में प्रस्तुत किया गया है। वह वस्तुतः भगवान हैं परंतु समाज के सामने एक मनुष्य रूप में आचरण करते हैं परंतु उनका ईश्वर रुप भी मानस में अनेक स्थानों पर प्रकट होता है :

मंगल भवन अमंगल हारी, द्रवहु हो दशरथ अजय बिहारी।
कहेहु तात अस मोर प्रनामा। सब प्रकार प्रभु पूरनकामा।।
दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ सम संकट भारी।।

गीत

पंकज शर्मा 'तरुण'
मंदसौर (म.प्र.)

आर्यावर्त है भारत मेरा, इसको सब सम्मान दो।
राम कृष्ण जन्में यहीं पर, असुरों थोड़ा ध्यान दो।।

घृणा कपट का ही फैलाया, भारत में जो जाल है।
भारत माता पूछ रही है, बेटे क्यों कंगाल है।।
विद्यालय मदिरालय बनते, इस पर थोड़ा ध्यान दो।
राम कृष्ण जन्में यहीं पर, असुरों थोड़ा ध्यान दो।।

अधिकारी अधिकार बिना ही,कठपुतली लगते यहां।
जी सर से आगे की भाषा, सब बिसरे दिखते यहां।।
हत्यारे भय मुक्त घूमते, कुछ तो इनको ज्ञान दो।
राम कृष्ण जन्में यहीं पर, असुरों थोड़ा ध्यान दो।।

लहू आपका काला होता,यह तो थोड़ा लाल हो
बिना बात के नगर शहर में,भाई क्यों हड़ताल हो।।
सच्चाई का गला कटा है,बोलों पर तुम कान दो।
राम कृष्ण जन्में यहीं पर,असुरों थोड़ा ध्यान दो।।

ईश्वर के समक्ष केवल प्रार्थना ही ना करें बल्कि ध्यान भी लगाएं। प्रार्थना में हम ईश्वर से बात करते हैं जबकि ध्यान में ईश्वर हमसे बात करते हैं।

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

रामकथा अमित गुणकारी

डॉ. शकुंतला कालरा
संपादक (अध्यात्म संदेश)
एसोसियेट प्रोफेसर
मैत्रेयीकॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

बालकांड से उत्तरकांड तक पूरे 'रामचरितमानस' में तुलसीदास ने रामकथा के अमित गुणों के यथाप्रसंग यथास्थान विश्वासपुष्ट कथन रखे हैं। जिनका निचोड़ है कि वह 'कामद गाई' अर्थात् कामधेनु गाय की भांति सबके मनोरथ पूरी करती है। समुद्र–मंथन से प्राप्त चौदह रतनों में से एक कल्पवृक्ष और कामधेनु गाय दोनों रत्न मनोवांछित फल देने वाले हैं।

कामधेनु गाय अर्थात् कामना–पूर्ति का नितांत अचूक साधन। सबकी कामनाऐं अलग–अलग हैं रामकथा सबकी कामनाएं पूरी करती है। जीव अलग–अलग प्रकार के हैं। रामकथा सभी जीवों की, सभी प्रकार की कामनाऐं पूर्ण करने वाला कल्पवृक्ष है। 'कामना' सुर–असुर, मुनि–नर सबकी अपनी–अपनी है। सुर–असुर दोनों को इन्द्रासन और स्वर्गाधिपति बनने की चाह होती है। ऋषि–मुनि आत्म–स्वरूप के दर्शन पाना चाहते हैं। मनुष्यों की भी अपनी–अपनी कामनाएं है। ज्ञानी, भक्त और विषयी तीनों अपने–अपने मनोरथ हैं, जिन्हें वे सिद्ध करने के लिए प्रयास करते हैं। ज्ञानी सृष्टि–कर्त्ता को विभु रूप में देखता है। सृष्टि के कण–कण में आत्मज्ञानी ईश्वर को देखता है। विषयी अर्थात् संसारी जीव, जिन्हें संसार, संसारिक सुख की कामना रहती है। उन्हें यह कथा संसारिक सुख, भोग–ऐश्वर्य सब देती है। रामचरितमानस में तुलसीदास ने इन तीनों प्रकार के जीवों का वर्णन किया है। सुंदरकांड के अंत में तुलसीदास ने इन तीनों प्रकार के जीवों की अपने–अपने अभीष्ट की प्राप्ति कही है। जीव तीन प्रकार के माने हैं,–विषयी, साधक, और सिद्ध। रामकथा सबके मनोरथ पूरी करती है। विषयी जीव को संसार और संसारिक सुख चाहिए उन्हें संसारिक सुख मिलेगा। साधक को संशय का समाधान मिलेगा। मायाजनित अज्ञान का नाश होगा। सिद्ध के विषाद का दमन होगा। होगा। सिद्ध का विषाद क्या है? मैं आखिरी सीढ़ी से गिर न जाऊं–

यह चरित कलिमलहर जथामति दास तुलसी गायऊ।।

सुखभवन संसय समन दवन बिषाद रघुपति गुन गना।। *रा.च.मा. 5/60/छंद*

तुलसीदास ने केवल रामकथा को ही कामधेनु नहीं कहा वरन् स्वयं राम को भी कामधेनु कहा है। जो मन की कामनाओं को परिपूर्ण करने वाले हैं–

प्रनत काम सुरधेनु कल्पतरु होई प्रसन्न दीजै प्रभु यह वर।

सनकादि चारों मुनि राम की स्तुति करते हैं और उनसे अत्यंत पवित्र करने वाली, विविध तापों का शमन करने वाली, जन्म–मरण के क्लेशों का नाश करने भक्ति वाली भक्ति की कामना करते है–

परमानंद कृपायतन मन परिपूरन काम।
प्रेम भगति अनपायनी देहु हमहि श्रीराम।।

देहु भगति रघुपति अति पावनि। त्रिबिधि ताप भवदाप नसावनि।।

रा.च.मा. 7/34दो.तथा35/1

जो गुण तुलसीदास ने रामकथा के कहे हैं वही गुण उनके आराध्य राम के हैं। राम और रामकथा अन्योनाश्रित है। जो गुण राम के, रामकथा के हैं, वही गुण राम की भक्ति के हैं। तीनों एक सा फल देने वाले हैं। राम की भक्ति भी रामकथा की भाँति तीनों प्रकार के ताप हरने वाली है।

जैसे रामकथा जन्म-मृत्यु के भय को दूर करती है वैसे ही राम भी। सनकादिक मुनि अपनी स्तुति में आगे कहते हैं –

भव वारिधि कुंभज रघुनायक। सेवत सुलभ सकल सुखदायक।

रा.च.मा. 7/35/2

राम की भक्ति संसृति अर्थात् संसार के जन्म-मृत्यु के डर को दूर करती है। संसार रूपी नदी के लिए राम की भक्ति नौका के समान हैं। अर्थात् जन्म-मृत्यु के भय से पार कर देती है। गरुण से भुशुण्डि जी कहते हैं कि राम संसार के समस्त भयों का नाश करने वाले हैं –

ससि सत कोटि सुसीतल समन सकल भव त्रास। रा.च.मा. 7/91.क

राम और रामकथा दोनों एक हैं क्योंकि रामकथा के आदि, मध्य और अंत में राम ही प्रतिपाद्य हैं। पक्षीराज गरुण जब मोहग्रस्त हो जाते हैं वह शिव के पास आते हैं। शिव उन्हें भुशुण्डि के पास संत्संग में हरिकथा सुनने का उपदेश देते हैं। जिस कथा को सुनते ही सारे संदेह दूर हो जाते हैं और राम के चरणों में प्रेम जाग्रत हो जाता है –

सुनिअ तहाँ हरिकथा सुहाई। नाना भाँति मुनिन्ह जो गाई।।
जेहि महुँ आदि मध्य अवसाना। प्रभु प्रतिपाद्य राम भगवाना।।
नित हरिकथा होत जहँ भाई। पठवउँ तहाँ सुनहु तुम्ह जाई।।
जाइहि सुनत सकल संदेहा। राम चरन होइहि अति नेहा।।

रा.च.मा. 7/61/3-4

शिव गरुण को समझाते हैं कि हरिकथा सुने बिना मोह नहीं भागता और मोह के नाश हुए बिना रामचन्द्र के चरणों में अचल प्रेम नहीं होता –

बिनु सत्संग न हरिकथा तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गएँ बिनु रामपद राम पद होइ न दृढ़ अनुराग।।

रा.च.मा. 7/61 दोहा

हरिकथा से ही मोह जनित दुःख दूर होते हैं –

जाइ सुनुहु तहं हरि गुन भूरी। होइहि मोह जनित दुःख दूरी।।
मैं जब तेहि सब कहा बुझाई। चलेउ हरषि मम पद सिर नाई।।

रा.च.मा. 7/62/2

पक्षीराज गरुण रामकथा के दिव्य प्रभाव को अनुभव करते हैं कि भुशुण्डि जी के आश्रम जहाँ नित हरिकथा होती है, के पास आते ही मोह, संदेह और कई प्रकार के उनके भ्रम स्वतः ही दूर भाग गए हैं। हरिकथा के इस अद्भुत प्रभाव को गरुण महसूस करते हैं। वह भुशुण्डि जी से उस दुःख समूह का नाश करने वाली कथा सुनने की विनती करते है –

अब श्रीराम कथा अति पावनि। सदा सुखद दुःख पुंज नसावनि।।

रा.च.मा. 7

गरुण जी ने भुशुण्डि जी से रामचरित सुने जिससे उनके सारे संदेह जाते रहे और राम-चरणों में प्रेम हो गया यही तो भक्त का अभीष्ट है –

गयउ मोर संदेह सुनुउं सकल रघुपतिचरित।
भयउ राम पद नेह तव प्रसाद बायस तिलक।।

रा.च.मा. 7/सोरठा 68 (क)

तुलसीदास कहते हैं कि श्रीराम की यह गूढ़कथा हरि की प्रेरणा से मैं इसे अपनी मति अनुरूप भाषा में यानी लोकभाषा में रच रहा हूँ। इस कथा को नाना विशेषणों से युक्त करते हुए उसकी विशेषता को बताया है। इस कथा की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह जीव के मायाजनित अज्ञान और संदेह को हरने वाली है। अज्ञान और माया ईश्वर-मिलन में सबसे बड़ी बाधा है। रामकथा अज्ञान-जनित संदेह और भ्रम का नाश करती है। व्यक्ति के दुःख का मूल कारण अज्ञान है। यह संसार अनित्य है। इसके सभी नाते-रिश्ते, धन-संपदा सब अनित्य हैं और इससे प्राप्त होने वाले सुख भी अनित्य है। क्षणिक है। फिर भी मनुष्य अपनी सारी शक्ति इनकी प्राप्ति और फिर इसकी संभाल में लगा देता है। मनुष्य-जन्म वृथा ही पूरा हो जाता है। कुछ छूट जाए यानी प्रियजनों की मृत्यु होने पर अथवा धन का नाश मनुष्य दुःखी और संतृप्त हो जाता है। यह कथा अज्ञान-जनित सभी भ्रम हरने वाली है। ज्ञान होने पर व्यक्ति इन वस्तुओं के पीछे भागता नहीं। जो उसे प्राप्त हो जाता है उसी को प्रारब्ध समझकर सुखी-दुःखी नहीं होता।

इस कथा की अगली विशेषता यह है कि यह विषयरस के प्रति विरक्ति जगाती है। विषय-रस को छोड़ना नहीं है। जीव को उसमें सुख तो मिलता ही है, वह भी रस है। लेकिन इनसे मिलने वाला सब सुख क्षणिक है। परिणामतः सभी विषय दुःख देने वाले हैं। तुलसीदास कहते हैं कि कथा से विषय-रस स्वतः फीके हो जाते हैं। संसार को छोड़कर इससे बाहर कहाँ जाओगे। घर को छोड़कर जंगल में कुटिया बना लोगे। रहना तो फिर यहीं इसी संसार में है। मनुष्य योनी मुक्ति की योनी है।

रामकथा से विषय-रस फीके लगने लगते हैं। उनमें न रुचि रहती है, न उनमें आनंद आता है। क्योंकि 'रामचरितमानस' राम की कथा है। क्योंकि तुलसीदास ने 'इहां न विषय कथा रस नाना' कहा है। विषयी व्यक्ति इसे रस लेकर नहीं पढ़ेगे क्योंकि रामकथा विषयों में आसक्ति बढ़ाने वाली नहीं है, वरन् आसक्ति छुड़ाने वाली है। इसमें राम की कथा का रस है। यह पूर्वाग्रह रामचरित से जुड़ी है। तुलसीदास कहते हैं कि इसमें मैंने किसी प्राकृतजन का गुणगान नहीं किया क्योंकि जिस कथा में प्राकृत अर्थात् संसारी व्यक्ति का गुणगान होता है वह सरस्वती को अच्छा नहीं लगता। वह सिर धुनकर पछताती है, कि काव्य-प्रतिभा किसी गलत व्यक्ति को मिल गई–

कीन्हें प्राकृत जन गुनगाना। सिर धुनि गिरा लगति पछिताना।।

रा.च.मा. 1/

मुक्ति की दशा को तुलसीदास जी ने जीव का भूरी भाग्य कहा है। विषयी व्यक्तियों को रामकथा में रस नहीं मिलेगा। रामकथा के तो वही अनुरागी हैं जो जीवन मुक्त होना चाहते हैं। वे निरंतर रामकथा के रस में डूबे रहते हैं। तुलसीदास जी स्पष्ट कहते हैं कि –

रामचरित जे सुनत अघाहीं। रस बिसेष जाना जिन्ह नाहीं।।

रा.च.मा. 7/53/1

जो जीवन मुक्त महामुनि हैं वे भी भगवान के गुणों वाली कथा निरंतर सुनते रहते हैं। जीव का प्रमुख लक्ष्य है मुक्ति अर्थात् विषयों की आसक्ति से मुक्ति। और जो इस दशा तक पहुँच जाते हैं तो भी वे निरंतर उसी रामकथा–सरोवर में डूबे रहना चाहते हैं, जो इस रस से अघा गए अर्थात् तृप्त हो गए तो समझिए कि उन्होंने कभी श्रेष्ठ रस को चखा ही नहीं। इसलिए तुलसीदास कहना चाहते हैं कि रामकथा कामद गाय है जो जिस भी भाव से इस रामचरितमानस में अवगाहन करता है वह उसी को प्राप्त करता है। जीवन मुक्ति की चाह रखने वाले जीवन मुक्ति प्राप्त करते हैं। इस कथा रस की सबसे बड़ी विशेषता ही यही है कि जिसे यह रस एक बार भा जाता है वह दूसरे रस – अर्थात् किसी सांसारिक रस की कामना ही नहीं करते। उनकी राम को छोड़कर और कोई कामना शेष ही नहीं रहती। यह बात तुलसीदास अपने अनुभव से कहते हैं –जहाँ काम तहाँ राम नही। जहाँ राम नहिं काम।

रामकथा की सारी घटनाऐं, सारे पात्र इस बात के साक्षी हैं कि जिसने जो चाहा है राम ने उसे वही–वही दिया है। ज्ञानियों को आत्म साक्षात्कार हुआ। मुक्ति की अभिलाषा करने वालों को मुक्ति की प्राप्ति हुई और भक्ति की उत्कट चाह रखने वालों को भक्ति मिली। जिन्होंने संसार मांगा उन्हें संसार मिला। सुग्रीव को राज्य की चाह है उसे राज्य मिला। विभीषण की भी सूक्ष्म में पड़ी इच्छा को राम ने जान लिया और न केवल 'लंकेश' नाम से संबोधित किया वरन् उसे लंकाधिपति बनाया। उसका राजतिलक करवाया। बालि मरणासन्न है। उसने मुक्ति की अभिलाषा की। प्रभु को पहचान लिया है और राम को अपने सामने पाकर अपना जन्म सफल मानता है –

पुनि–पुनि चितइ चरन चित दीन्हा। सुफल जन्म माना प्रभु चीन्हा।।

रा.च.मा. 4/9/3

बालि राम से प्रश्न करता है कि –

धर्म हेतु अवतरेह गोसाईं। मारेहु, मोहि ब्याध की नाईं।।
मैं बैरी सुग्रीव पिआरा। अवगुन कवन नाथ मोहिमारा।।

रा.च.मा. 4/9/3

राम उसे प्राणदान देना चाहते हैं 'अचल करौं तनु राखदु प्राणा' पर वह कहता है कि मुझे जीवनदान नहीं आपके हाथों मुक्ति चाहिए क्योंकि यह बालि भी जानता है कि –

जन्म–जन्म मुनि जतनु कराहीं। अंत राम कहि आवत नाहीं।।
जासु नाम बल संकर कासी। देत सबहि सम गति अबिनासी।।

रा.च.मा. 4/10/2

अंतिम समय बालि ने यही कहा कि आप मुझे जीवनदान नहीं अपनी भक्ति दीजिए –

अब नाथ करि करुना बिलोकहु देहु जो बर मागऊँ।
जेहिं जोनि जन्मौं कर्म बस तहँ राम पद अनुरागऊँ।।

रा.च.मर. 4/10/छंद 2

राम ने न केवल उसे भक्ति का वरदान दिया वरन् मुक्ति भी प्रदान की। सालोक्य मुक्ति दी यानि अपना लोक, अपना धाम दिया –

राम बालि निज धाम पठावा। *रा.च.मा. 4/11/1*

राम अपने भक्तों को मुक्ति रूप में निज धाम देते हैं। निज पद देते हैं। निज–पद अर्थात् अपना दिव्य स्वरूप यानी सारूप्य मुक्ति देते हैं। मुनि विश्वामित्र की यश–रक्षा के लिए राम ने ताड़का का वध किया और उसे निज पद दिया –

एकहिं बान प्रान हरि लीन्हा। दीन जानि तेहि निज पद दीन्हा।।

रा.च.मा. 1/209/3

जटायु को भी प्रभुराम ने अविरल भक्ति के वरदान के साथ अपना धाम भी दिया। उसका अंतिम संस्कार अपने हाथों से किया। यद्यपि गीध अत्यंत अधम पक्षी है, आमिष भोगी है उसे भी राम ने वह गति दी जिसकी अभिलाषा योगीजन करते हैं –

अबिरल भगति मागि बर गीध गयउ हरिधाम।
तेहि की क्रिया जथोचित निज कर कीन्ही राम।।
गीध अधम खग आमिष भोगी। गति दीन्ही जो जाचत जोगी।।

रा.च.मा.3/32/दोहा–33/1

राम, राम की कथा दोनों एक है, वैसे ही जैसे राम और राम का नाम एक है। तुलसीदास ने जैसे रामकथा को 'कलिमल हरनि' कहा है वैसे ही राम–नाम भी कलियुग में समस्त पापों का नाश करने वाला है। ममता को मारने वाला है। राम भाई भरत और हनुमान के साथ नगर के बाहर बैठे हैं। उसी समय नारद आते हैं और राम का यशोगान करते हुए उनके नाम की महिमा का वर्णन करते हैं कि रामनाम कलियुग के पापों का नाश करने वाला है –

कलिमल मथन नाम ममताहन। तुलसिदास प्रभु पाहि प्रनत जन।।

रा.च.मा. 7/51/5

शिव ने पार्वती से भी यही कहा कि राम की कथा भगवान के परमपद को देने वाली है –

बिमल कथा हरि पद दायनी।। *रा.च.मा. 7/52/3*

दूसरे प्रसंग में भी शिव पार्वती से यही कहते हैं कि जो भक्ति और मुक्ति की कामना करता हो, वह यदि भाव–सहित इस कथारूपी अमृत को पान करेगा उसे दोनों प्राप्त होंगे। रामकथा भवसागर से पार करने वाली दृढ़ नौका है। पार्वती शिव से रामकथा सुनने के बाद अपने को धन्य–धन्य मानती हैं और शिव से कहती हैं –

भव सागर चह पार जो पावा। राम कथा तो कहँ दृढ़ नावा।

रा.च.मा. 7/53/2

समाज के विभिन्न वर्गो के लिए

सुन्दरकाण्ड की उपयोगिता

डॉ. शारदा मेहता
स्वतंत्र लेखन
ऋषिनगर विस्तार,
उज्जैन (म.प्र.)

सम्पूर्ण राम–साहित्य हमारी सनातन संस्कृति का पोषक है। उसका प्रत्येक क्रियाकलाप तथा घटनाक्रम श्रीराम भक्त का मार्गदर्शन करते हैं। जीवन के नकारात्मक विचारों को नष्ट कर सकारात्मक सोच की ओर अग्रसर करते हैं। गोस्वामी तुलसीदासजीकृत श्रीरामचरितमानस का पंचम काण्ड सुन्दरकाण्ड हमारा पग–पग पर मार्गदर्शन करता है। समाज के कतिपय प्रमुख वर्ग के लिए सुन्दरकाण्ड कितना उपयोगी है इस विषय पर हम अपने विचार व्यक्त करने का प्रयत्न करेंगे–

विद्यार्थी वर्ग – बालक के जीवन की सुदृढ़ नींव उसकी बाल्यावस्था में ही रखी जाती है। उस समय उसमें जिन आदतों का बीजारोपण कर दिया जाता है, वहीं से उसके जीवन का विकासक्रम प्रारंभ हो जाता है। श्रीराम की बाल्यावस्था पर दृष्टिपात करें तो हमें बालकाण्ड पढ़ना होगा–

प्रात:काल उठि कै रघुनाथा। मातु पिता गुरु नावहिं माथा।।
आयसु मागि करहि पुर काजा। देखि चरित हरषइ मन राजा।।

(श्रीरामचरितमानस बालकाण्ड दो. २०५/४)

श्रीराम के जीवन में बाल्यावस्था की आदतें पल्लवित और पुष्पित होती रही और वनवास काल में भी उनका जीवन विभिन्न आश्रमों को निशाचरविहीन करने में समर्पित रहा। अध्ययन के प्रति समर्पण, धैर्य, आत्मविश्वास की भावना प्रत्येक विद्यार्थी में होनी चाहिए। जब तक उसे अपने लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाए तब तक उसके कार्य में निरन्तरता बनी रहनी चाहिए–

हनुमान तेहि परसाकर पुनि कीन्ह प्रनाम। रामकाजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ विश्राम।।

(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड दो. १)

विद्यार्थियों को अध्ययन के लिए जाने के पूर्व तथा परीक्षा कक्ष में प्रवेश के पूर्व निम्नलिखित चौपाई सदैव पढ़ना चाहिए–

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदय राखि कोसल पुर राजा।

(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड दोहा ४/१)

श्रीहनुमानजी का चरित्र विद्यार्थी के लिए प्रकाशपुंज है। जो भी कार्य उन्हें सौंपा जाता वे उसे बड़ी लगन, उत्साह और आत्मसमर्पण के साथ करते हैं। सीतान्वेषण का कार्य इस कथन का ज्वलन्त उदाहरण है। विद्यार्थियों के लिए हनुमानजी की कार्यशैली प्रेरणास्पद है। उनसे संयमित जीवन, ज्ञान, बुद्धि, विनम्रता, संवाद कौशल आदि सीखने को मिलता है। वयोवृद्ध व्यक्तियों का सम्मान करना भी हनुमानजी से सीखना चाहिए। जामवन्तजी वयोवृद्ध हैं। वे हनुमानजी को मौन देखते हैं। हनुमानजी की चुप्पी उन्हें अच्छी नहीं लगती है। वे हनुमानजी की शक्ति का स्मरण कराते हैं–

कहइ रीछपति सुनु हनुमाना। का चुप साधि रेहेहु बलवाना।।
पवन तनय बल पवन समाना। बुद्धि बिबेक बिज्ञान निधाना।।

(श्रीरामचरितमानस किष्किन्धा दो. ३०/२)

जामवन्त जी श्री हनुमान जी को कहते हैं– हे बलवान सुनो, तुमने यह चुप्पी क्यों साधी है? तुम पवन के पुत्र हो, पवन के समान बलवान हो। बुद्धि, विवेक और विज्ञान की खान हो।

कवन सो कान कठिन जग माहीं। जो नहिं होइ तात तुम्ह पाहीं।।
राम काज लगि तव अवतारा सुनतहिं भयउ पर्बताकारा।।

(श्रीरामचरितमानस किष्किन्धाकाण्ड दोहा ३०/३)

अर्थात् जगत् में ऐसा कौन सा कठिन काम है जो तात! तुम से नहीं हो सकता है। श्रीराम के लिए ही तो तुम्हारा अवतार हुआ है। यह सुनते ही हनुमानजी ने पर्वताकार रूप दिखा दिया।

इस उदाहरण से यह दृष्टव्य है कि हनुमानजी वयोवृद्ध जामवन्त जी का सम्मान करते हैं। उनके सामने विनम्र हैं। उनके कहने पर रामजी का कार्य करने के लिए तत्पर हैं। मार्ग में उन्हें अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ता है। वे समयानुसार अपने स्वरूप में परिवर्तन कर लेते हैं और लंका में प्रवेश करते हैं।

कुशल राजनयिक – श्रीहनुमानजी अपनी त्वरित बुद्धि और वाक् चातुरी का समय–समय पर प्रयोग कर अपने कार्य में सफल होते हैं। अशोक वाटिका में मेघनाद जब ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करता है तो श्री हनुमानजी उसका सम्मान करते हैं और मूर्च्छित हो जाते हैं। उन्हें रावण के दरबार में ले जाते हैं। रावण को अपना परिचय देते हुए वे कहते हैं–

जा के बल बवलेस ते जितेहु चराचर झारी।
तासु दूत में जा करि हरि आने हु प्रिय नारी।।

(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड दोहा २१)

अर्थात् लेशमात्र बल से सारे चराचर मात्र को तुमने जीत लिया और जिनकी प्रिय स्त्री को तुम हर लाए हो उनका मैं दूत हूँ। आपके प्रभुत्व को मैं जानता हूँ। यहाँ हनुमानजी यह परिचय देते हैं कि मैं श्रीराम का दूत हूँ। स्वभाव से मैं वानर हूँ। वाटिका में मुझे भूख लगी तो मैंने वृक्ष से फल तोड़े और खा लिए। श्रीराम के दूत होने के कारण वे क्षुधापूर्ति तो कर ही सकते हैं। सीताजी से निशानी के रूप में चूड़ामणि लाकर रामजी को देते हैं जिससे श्रीरामजी को पूर्ण विश्वास हो जाता है कि वे सीताजी से मिल कर आए हैं। विभीषण जब श्रीराम के पास आते हैं तो हनुमानजी प्रसन्न होते हैं। श्रीराम उन्हें शरणागति प्रदान करते हैं।

साहसी और महावीर – हनुमानजी का साहसी और महावीर स्वरूप भी मानव मात्र के लिए अनुकरणीय है। सीताजी की आज्ञा से फल भक्षण करते हैं और वृक्षों को भी समूल तोड़ रहे हैं– 'फल खाएसि तरु तो रैं लगा।' वाटिका के रक्षकों से निडर होकर मल्ल युद्ध करते हैं। रावण पुत्र अक्षय कुमार जब मध्यस्थता करने आता है तो हनुमानजी उसका वध कर देते हैं। मेघनाद के ब्रह्मास्त्र का सम्मान करते हैं। रावण दरबार में उसे सलाह देते हैं कि वो अभिमान त्याग कर श्रीराम नाम का भजन करें–

भजहु राम रघुनायक कृपा सिंधु भगवान।

(सुन्दरकाण्ड दोहा २३)

रावण यह सुनकर अत्यधिक क्रोधित होता है। वह कहता है–

'मृत्यु निकट आई खल तोही। लागेसि अधम सिखावन मोही।'

वह हनुमानजी के अंग भंग करना चाहता था पर विभीषण तथा सचिव ने सलाह दी कि कपि को अपनी पूँछ सबसे अधिक प्रिय होती है इसलिए इसमें वस्त्र बाँध कर आग लगा दी जाए। लंका के घरों में वस्त्र शेष नहीं रहे, तेल घी भी समाप्त हो गया। पूँछ की लम्बाई बढ़ती गई। हनुमानजी जरा भी विचलित नहीं हुए। वे लंका वासियों का मनोरंजन कर रहे थे। जलती हुई पूँछ के साथ वे सम्पूर्ण लंका में घूमे। धूँ–धूँ कर लंका जल गई। केवल विभीषण का घर व अशोक वाटिका सुरक्षित रहे। साहसी हनुमानजी समुद्र में कूद गए। वहाँ से सीताजी की अशोक वाटिका में आए। उनसे श्रीराम को देने के लिए निशानी प्राप्त की। यह घटनाक्रम हनुमानजी के साहसी तथा महावीर होने की ओर इंगित करता है।

गृहस्थ के लिए – सुन्दरकाण्ड एक गृहस्थ के लिए अत्यधिक उपयोगी है। इसमें गृह प्रबन्धन की शिक्षा प्राप्त होती है। एक गृहस्थ को सदैव संयमित, परिवार के कल्याण के लिए परिश्रमी, बहुमुखी भूमिका, दूरदर्शिता, संवाद करने में कुशल होना चाहिए। उसे विभीषण के समान सद्गुणी, अग्रज को समय–समय पर उचित सलाह देने वाला, श्रीराम का भक्त होना चाहिए। उसका रामनामांकित घर, आँगन में तुलसी–चौरा, विभीषण की आतिथ्यकला जो सनातन धर्म परम्परा की नींव है। लंका में सुख शान्ति स्थापित करने के लिए सर्वदा तत्पर रहना। एक सफल गृहस्थ को अपने घर में शनिवार और मंगलवार को सुन्दरकाण्ड का पाठ करना चाहिए। श्रीराम के सेवक हनुमानजी की विभीषण हर संकट की घड़ी में हृदय से सहायता करते हैं। एक गृहस्थ को अपने परिवार, नगर, देश तथा राष्ट्र में शान्ति स्थापित करने के लिए अपने इष्ट देव का सर्वदा स्मरण करना चाहिए।

व्यापारी वर्ग के लिए– प्रत्येक व्यापारी अपने व्यापार को फलता–फूलता देखना चाहता है। व्यापार में उतार–चढ़ाव, हानि–लाभ, माँग और पूर्ति का सन्तुलन, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार

की स्थिति आदि अनेक ऐसी परिस्थितियाँ हैं, जिसमें कि निर्णय क्षमता बौनी हो जाती है। ऐसे में उसे ईश्वर ही एकमात्र आश्रय दिखाई देता है, जो उसकी नैया पार लगा सकता है। मन बैचेन हो, नकारात्मकता ने जीवन को परेशानी में डाल रखा हो तो ऐसे समय इन पंक्तियों के स्मरण से सकारात्मक भाव आएंगे–

सिन्धु तीर एक भूधर सुन्दर। कौतुक कूदि चढ़ेउ ता ऊपर।।
बार बार रघुबीर सँभारी। तरकेउ पवन तनय बल भारी।।

(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड दोहा १/३)

व्यापारी को चाहिए कि व्यापारिक संस्थान का प्रतिदिन कार्य प्रारंभ करने के पूर्व श्रीराम और हनुमानजी का श्रद्धापूर्वक स्मरण करें–

'प्रबसि नगर कीजै सब काजा। हृदय राखि कोसलपुर राजा।।'

(श्रीरामचरितामनस सुन्दरकाण्ड दोहा ५/१)

यदि संभव हो तो श्रीरामजी व हनुमानजी का चित्र लगाएँ। सुबह–शाम दीपक प्रज्ज्वलित करें। दिन में एक बार सुन्दरकाण्ड का पाठ करे, जिससे व्यापारी का मानसिक सन्तुलन बना रहेगा। सुख शान्ति बनी रहेगी। व्यापारीगण के समक्ष समस्याएँ सुरसा के मुँह के समान विकराल रूप ले ले तो भी आत्मविश्वास रखना चाहिए–

जस जस सुरसा बदनु बढ़ावा। तासु दून कपि रुप देखावा।।
सत जोजन तेहिं आनन कीन्हा। अति लघु रुप पवन सुत लीन्हा।।

(श्रीरामचरितामानस सुन्दरकाण्ड दोहा २/५)

नारी वर्ग के लिए– नारी वर्ग के लिए सुन्दरकाण्ड पूर्ण रूप से शिक्षाप्रद है। जिस प्रकार सीताजी रामभक्त हनुमानजी के अशोक वाटिका में पहुँचने पर उन पर विश्वास नहीं करती है। उन्हें शंका है कि वानर स्वरूप में छद्म वेष में कोई राक्षस आकर उनकी परीक्षा तो नहीं ले रहा है। पंचवटी में स्वर्ण मृग के रूप में मारीच राक्षस तथा साधु के वेष में रावण से वे धोखा खा चुकी हैं। इसलिए वे प्रतिपल सतर्क रहती हैं। वर्तमान समय में प्रत्येक नारी को भी सतर्क रहना चाहिए। क्योंकि हम प्रतिदिन महिलाओं के साथ होने वाली लूट, चारित्रिक अत्याचार तथा धोखाधड़ी की घटनाओं के समाचार पढ़ते रहते हैं। हनुमानजी ने जब रामनामांकित मुद्रिका उनके सम्मुख नीचे डाली तो भी उन्हें वह अंगार प्रतीत हुई जो वह आत्मदाह करने के लिए चाह रही थी। तब हनुमानजी ने वृक्ष के नीचे उतर कर सीताजी से विनती करते हुए कहा–

'राम दूत मैं मातु जानकी। सत्यसपथ करुणानिधान की।'

(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड दोहा १३/९)

सीताजी जब 'करुणा निधान' शब्द सुनती है तो उन्हें जनकपुरी की पुष्पवाटिका का स्मरण होता है जहाँ वे अपनी सखियों के संग गौरी पूजन के लिए जाती हैं। गौरी उन्हें आशीर्वाद देती है–

'मन जाहि राच्यो मिलहि सो वर सहज सुन्दर सांवरो।
करुणानिधान सुजान शील सनेह जानत रावरो।।6।।

(श्रीराम स्तुति, गोस्वामी तुलसीदास)

जब हनुमानजी के मुख से वे 'करुणानिधान' शब्द सुनती है तो उन्हें पूर्ण विश्वास हो जाता है कि यह कपि श्रेष्ठ श्रीराम का ही दूत है क्योंकि मैं ही श्रीराम को करुणानिधान कहती थी। महिलाएँ समाज में दिए जाने वाले विभिन्न प्रलोभनों से बचे। जैसे सीताजी रावण द्वारा दिए गए प्रलोभन को अस्वीकृत कर देती हैं–

कह रावनु सुनु सुमुखि सयानी। मन्दोदरी आदि सब रानी।।
तव अनुचरी करउं पन मोरा। एक बार बिलोकुमम ओरा।।

(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड दोहा ९/४)

विभीषण की पुत्री त्रिजटा को अशोक वाटिका में सीताजी की सेविका के पद पर नियुक्त किया था–

त्रिजटा नाम राक्षसी एका। रामचरन रति निपुन विवेका।।

सीताजी उसका बहुत विश्वास करती थी। वह सीताजी को समयोचित सलाह देती थी और संकट के समय उनकी रक्षा करके उनका मनोबल बढ़ाती थी।

सुन्दरकाण्ड समाज के सभी वर्गों के लिए उपयोगी है। अवसाद के क्षणों में, कठिन परिस्थितियों में तथा एकाकी क्षणों में प्रत्येक व्यक्ति को अपने इष्ट देव का स्मरण करके आत्मिक शान्ति प्राप्त होती है। अवकाश के समय पाँच मिनिट मौन रहकर श्रीरामजी तथा हनुमानजी को स्मरण कर आत्मनिरीक्षण करना चाहिए। भारत में तो सुन्दरकाण्ड के वाचन तथा भजन मंडली द्वारा पारायण की परम्परा प्रसिद्ध है ही विदेशों में भी जहाँ–जहाँ भारतीय निवास करते हैं वे भी अपनी भारतीयता तथा सनातन संस्कृति को अक्षुण्ण बनाए रखते हैं–

मनोजवं मारुत तुल्य वेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।
वातात्मजं वानरयूथ मुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये।।३३।। ■

(श्रीबुद्धकौशिकमुनि विरचित रारक्षास्तोत्रम्)

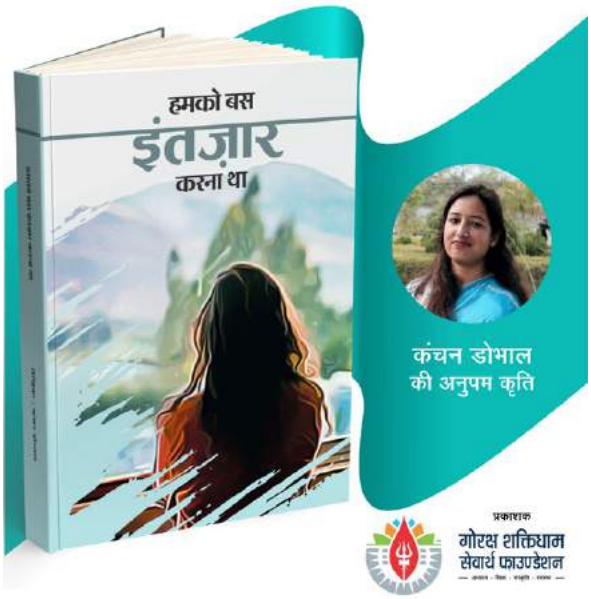

Flipkart amazon पर उपलब्ध

क्या है भारतीय संस्कृति में 16 संस्कार?

पंडित कैलाशनारायण
ज्योतिषाचार्य
उज्जैन, मध्य प्रदेश

संस्कार का क्या अर्थ है?–

1–संस्कृत भाषा का शब्द है संस्कार। मन, वचन, कर्म और शरीर को पवित्र करना ही संस्कार है। हमारी सारी प्रवृतियों और चित्तवृत्तियों का संप्रेरक हमारे मन में पलने वाला संस्कार होता है। संस्कार से ही हमारा सामाजिक और आध्यात्मिक जीवन पुष्ट होता है और हम सभ्य कहलाते हैं।व्यक्तित्व निर्माण में हिन्दू संस्कारों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।संस्कार मनुष्य को पाप और अज्ञान से दूर रखकर आचार–विचार और ज्ञान–विज्ञान से संयुक्त करते हैं।सोलह संस्कार बताए गए हैं।वेदज्ञों अनुसार गर्भस्थ शिशु से लेकर मृत्युपर्यंत जीव के मलों का शोधन, सफाई आदि कार्य को विशिष्ट विधि व मंत्रों से करने को संस्कार कहा जाता है। यह इसलिए आवश्यक है कि व्यक्ति जब शरीर त्याग करे तो सद्गति को प्राप्त हो।इन संस्कारों के अनुसार जीवन–यापन करने से मनुष्य जीवन के लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है।

2–हिंदू धर्म में सोलह संस्कारों का बहुत महत्व है।ये संस्कार ही प्रत्येक जन्म में संगृहीत (एकत्र) होते चले जाते हैं, जिससे कर्मों (अच्छे–बुरे दोनों) का एक विशाल भंडार बनता जाता है। इसे संचित कर्म कहते हैं। इन संचित कर्मों का कुछ भाग एक जीवन में भोगने के लिए उपस्थित रहता है और यही जीवन प्रेरणा का कार्य करता है। अच्छे–बुरे संस्कार होने के कारण मनुष्य अपने जीवन में अच्छे–बुरे कर्म करता है। फिर इन कर्मों से अच्छे–बुरे नए संस्कार बनते रहते हैं तथा इन संस्कारों की एक अंतहीन श्रृंखला बनती चली जाती है, जिससे मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्माण होता है।

3–प्राचीन काल में हमारा प्रत्येक कार्य संस्कार से आरम्भ होता था। उस समय संस्कारों की संख्या भी लगभग चालीस थी। जैसे–जैसे समय बदलता गया तथा व्यस्तता बढती गई तो कुछ संस्कार स्वतः विलुप्त हो गये। इस प्रकार समयानुसार संशोधित होकर संस्कारों की संख्या निर्धारित होती गई। गौतम स्मृति में चालीस प्रकार के तथा व्यास स्मृति में सोलह संस्कारों का वर्णन हुआ है। वेद, स्मृति और पुराणों में अनेकों संस्कार बताए गए है किंतु उनमें से मुख्य सोलह संस्कारों में ही सारे संस्कार सिमट जाते हैं अतः इन संस्कारों के नाम निम्नानुसार हैं...

1. गर्भाधान संस्कार
2. पुंसवन संस्कार
3. सीमन्तोन्नयन संस्कार
4. जातकर्म संस्कार
5. नामकरण संस्कार
6. निष्क्रमण संस्कार
7. अन्नप्राशन संस्कार
8. मुंडन/चूडाकर्म संस्कार
9. विद्यारंभ संस्कार
10.कर्णवेध संस्कार
11. यज्ञोपवीत संस्कार
12. वेदारम्भ संस्कार
13. केशान्त संस्कार
14. समावर्तन संस्कार
15. विवाह संस्कार
16. अन्त्येष्टि संस्कार/श्राद्ध संस्कार

1. गर्भाधान संस्कारय : हमारे शास्त्रों में मान्य सोलह संस्कारों में गर्भाधान पहला है। गृहस्थ जीवन में प्रवेश के उपरान्त प्रथम कर्त्तव्य के रूप में इस संस्कार को मान्यता दी गई है। गार्हस्थ्य जीवन का प्रमुख उद्देश्य श्रेष्ठ सन्तानोत्पत्ति है। उत्तम संतति की इच्छा रखनेवाले माता–पिता को गर्भाधान से पूर्व अपने तन और मन की पवित्रता के लिये यह संस्कार करना चाहिए। दैवी जगत् से शिशु की प्रगाढ़ता बढ़े तथा ब्रह्माजी की सृष्टि से वह अच्छी तरह परिचित होकर दीर्घकाल तक धर्म और मर्यादा की रक्षा करते हुए इस लोक का भोग करे यही इस संस्कार का मुख्य उद्देश्य है।विवाह उपरांत की जाने वाली विभिन्न पूजा और क्रियायें इसी का हिस्सा हैं।

गर्भाधान मुहूर्त : जिस स्त्री को जिस दिन मासिक धर्म हो,उससे चार रात्रि पश्चात सम रात्रि में जबकि शुभ ग्रह केन्द्र (1,4,7,10) तथा त्रिकोण (1,5,9) में हों, तथा पाप ग्रह (3,6,11) में हों ऐसी लग्न में पुरुष को पुत्र प्राप्ति के लिये अपनी स्त्री के साथ संगम करना चाहिये। मृगशिरा, अनुराधा, श्रवण, रोहिणी, हस्त, तीनों उत्तरा, स्वाति, धनिष्ठा और शतभिषा इन नक्षत्रों में षष्ठी को छोड कर अन्य तिथियों में तथा दिनों में गर्भाधान करना चाहिये,भूल कर भी शनिवार मंगलवार गुरुवार को पुत्र प्राप्ति के लिये संगम नही करना चाहिये।

2. पुंसवन संस्कारय : ▸गर्भ के तीसरे माह में विधिवत पुंसवन संस्कार सम्पन्न कराया जाता है, क्योंकि इस समय तक गर्भस्थ शिशु के विचार तंत्र का विकास प्रारंभ हो जाता है। शास्त्रों में गर्भ को पूज्य माना गया है, क्योंकि माता के गर्भ के माध्यम से जो जीव मनुष्य रूपी संसार का हिस्सा बनना चाहता है उसे खासतौर पर ईश्वर का प्रतिनिधि माना जाता है। गर्भ ठहर जाने पर भावी माता के आहार, आचार, व्यवहार, चिंतन, भाव सभी को उत्तम और संतुलित बनाने का प्रयास किया जाता है। हिन्दू धर्म में, संस्कार परम्परा के अंतर्गत भावी माता–पिता को यह तथ्य समझाए जाते हैं कि शारीरिक, मानसिक दृष्टि से परिपक्व हो जाने के बाद, समाज को श्रेष्ठ, तेजस्वी नई पीढ़ी देने के संकल्प के साथ ही संतान पैदा करने की पहल करें। उसके लिए अनुकूल वातवरण भी निर्मित किया जाता है।

▸ वेद मंत्रों, यज्ञीय वातावरण एवं संस्कार सूत्रों की प्रेरणाओं से शिशु के मानस पर तो श्रेष्ठ प्रभाव पड़ता ही है, अभिभावकों और परिजनों को भी यह प्रेरणा मिलती है कि भावी माँ के लिए श्रेष्ठ मन:स्थिति और परिस्थितियाँ कैसे विकसित की जाए ।इसके अलावा गर्भवती स्त्री को इस बात का आश्वासन देना भी अनिवार्य होता है कि, वो शिशु के गर्भ में रहने के दौरान हर प्रकार के ईर्ष्या, क्रोध, दोष और अन्य प्रकार के सभी विकारों से खुद को दूर रखेगी और शिशु के उज्जवल भविष्य की कामना में ही अपना ज्यादातर समय देगी।

▸ पुंसवन संस्कार के दौरान सबसे पहले गिलोय वृक्ष के तने से कुछ बूँदे निकालकर मंत्रोउच्चारण के साथ गर्भवती महिला की नासिका छिद्र पर लगाया जाता है। गिलोय के रस को खासतौर से कीटाणुरहित और रोगनाशक माना जाता है। इस संस्कार को करते समय विशेष रूप से गिलोय के रस को औषधि के रूप में किसी कटोरे में लेकर गर्भवती स्त्री को दिया जाता है। इस दौरान संस्कार में उपस्थित लोग विशेष रूप से "ॐ अदभ्य: सम्भृत: पृथिव्यै रसाच्च, विश्वकर्मण: संवर्त्ततग्रे। तस्य त्वष्टा विदध द्रूपमेति, तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजानमग्रे। " मंत्र का उच्चारण करते हैं। मान्यता है कि मंत्रोउच्चारण के बीच गर्भवती स्त्री अपने दाहिने हाथ से औषधि को अपनी नासिका के ऊपर लगाकर श्वास को अंदर खींचें। जिस दौरान, होने वाले शिशु के पिता सहित परिवार के अन्य सभी सदस्य भी अपना दाहिना हाथ गर्भवती स्त्री के पेट पर रखें और उपरोक्त मन्त्र का जाप करते हुए भगवान से शिशु को अच्छा स्वास्थ्य प्रदान करने की प्रार्थना करे ।

▸ क्रिया और भावना...इस क्रिया के दौरान सबसे पहले गर्भवती स्त्री अपने दायें हाथ को पेट पर रखती है और उसके बाद पिता एवं परिवार के अन्य सदस्य भी अपना दाहिना हाथ गर्भवती स्त्री के पेट पर रखकर दैवीय शक्ति को इस मंत्रोउच्चारण के द्वारा शिशु के उचित विकास के लिए आश्वस्त करते हैं...

"ॐ यत्ते सुशीमे हृदये हितमन्त: प्रजापतौ। मन्येहं मां तद्विद्वांसं, माहं पौत्रमघनिन्याम। गर्भ पूजन के लिए गर्भिणी के घर परिवार के सभी वयस्क परिजनों के हाथ में अक्षत, पुष्प आदि दिये जाएँ ..मन्त्र बोला जाए। मंत्र समाप्ति पर एक तश्तरी में अक्षत, पुष्प आदि एकत्रित करके गर्भिणी को दिया जाए । वह उसे पेट से स्पर्श करके रख दे । उस समय भावना की जाए,कि गर्भस्थ शिशु को सद्भाव और देव अनुग्रह का लाभ देने के लिए पूजन किया जा रहा है । गर्भिणी उसे स्वीकार करे कि वह गर्भ को लाभ पहुँचाने में सहयोग कर रही है ।

क्रमश: ...

झूठे का बोलबाला

प्रो. डॉ. दिवाकर दिनेश गौड़
गोधरा, गुजरात

खूब पढ़ा था जग में हमने सच्चे का बोलबाला
और पढ़ा था ये भी हमने झूठे का मुंह काला
देख जगत में आज रहे हैं सच्चे का मुंह काला
चारों ओर बस सुनाई पड़ता झूठे का बोलबाला

सत्य शिव है, सत्य है सुंदर
सच्चा है ये जहान
झूठ का दलदल जन को फंसाए
बात तो तू ये जान

सत्य –झूठ में द्वंद छिड़ा है बदले झूठ है पाला
चारों ओर बस सुनाई पड़ता झूठे का बोलबाला।

सत्य सत्य का दुश्मन बनता
विजयी झूठ तब होता
न्याय न्याय को काटे जब है
अन्याय तब हावी होता

झूठ तभी तो छीने जग में सत्य का है निवाला
चारों ओर बस सुनाई पड़ता झूठे का बोलबाला।
देख जगत में आज रहे हैं सच्चे का मुंह काला
चारों ओर बस सुनाई पड़ता झूठे का बोलबाला।

यदि मंज़िल न मिले तो रास्ते बदलो !
क्योंकि वृक्ष अपनी पत्तियाँ बदलते हैं जड़े नहीं !!

ग़ज़ल

दिलीप वर्मा 'मीर'
राजस्थान

पेश ए खिदमत में :
उन्वान: जिन्दगीं

कट रही है ये जिंदगी इस नज़ाक़त में
बचाये कैसे खुद को इस सदाक़त में

माटी को देख कर कुचागर रो दिया
टुटे कैसे खिलौनें मेरे इस अदावत में

हर कली खिल उठी देख के सबा को
झुलस गये कई सज़र इस तमाज़त में

किस का जिक्र करें इस बे दर्द ज़माने में
कौन अपना सा होता है इस इनायत में

रेज़ा २ बिखर गया दिल पे एक ही ज़र्ब से
कोई न आये इश्क़ ए बीमार ए अयादत मे

जिन्दगीं जीनें का सलिक़ा सीखना ही होगा
जहर भी पीना होगा मुझे बे दर्द मौहब्बत में

इतने बुरे भी नहीं की रू–ब–रू आदाब नहीं
'मीर' लगता मुझे भूला दिया इस हिक़ायत में

शब्दार्थ :
नज़ाक़त – कोमलता
सदाक़त – ईमानदारी
अदालत – वैमनस्य
तमाज़त – ताप/गर्मी
इनायत – मेहरबानी
हिक़ायत – कहानियां
ज़र्ब – चोट
सलिक़ा – शिष्टाचार

स्वतंत्रता संग्राम का आदि पुरुष संबधित प्रश्नों के साये में

रीता रानी
जमशेदपुर, झारखंड

उपनिवेशवाद और आदिवासी समाज इतिहास के अध्ययन सामग्री में एक तथ्य है। सचमुच कमाल की बात है कि वर्तमान की इस अंधी भौतिक दौड़ में जहां वे मोटे तौर पर आज भी सभ्यता के मानकों की आधारभूमि पर पीछे अवस्थित प्रतीत होते हैं य वहीं जब प्रश्न चिन्ह उनके अपनेअस्तित्व की रक्षा और स्वअस्मिता की स्वतंत्रता पर अंकित होने लगा, तो उनकी चेतना, उनका संघर्ष, उनकी आग, उनकी क्रांति, उनका वैचारिक औदात्य, उनकी जिजीविषा, उनका जातिगत अभिमान,उनकी अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता ये सब अपनी पराकाष्ठा पर होते हुए, अपनी सर्वश्रेष्ठ ऊंचाई पर एकीकृत हो अपनी उपस्थिति की व्याख्या करते हैं, तभी तो निर्दयी, क्रूर, अत्याचारी, शोषक परन्तु संगठित, आधुनिक हथियार एव सैन्य शक्ति से सुसंपन्न उन विदेशी आक्रांताओं की आंखों में भी आंखें डाल उनकी तोपों के सम्मुख अपना नग्न सीना सामने रख दिया, उन पदाक्रांताओं के जिनके साम्राज्य का सूरज कभी डूबता ही नहीं था मात्र अपने परंपरागत हथियारों के बल पर, मात्र अपनी छोटे से समूहबद्धता की शक्ति को अवलम्ब बनाकर। परंतु उनकी प्रचण्ड इच्छाशक्ति और अदम्य साहस के लिए 'मात्र' ऐसे शब्दसंयोग का प्रयोग नहीं किया जा सकता।

'प्रेम' की आध्यात्मिक अनुभूति को आत्मा का रागविषय जानने वाली धरती का तथाकथित सभ्य समाज जब इस परिज्ञान से परे 'वैलेन्टाइन वीक' के क्रमिक आयोजन में अपनी उर्जा, अपनी संवेदना खपाए बैठा है तो धन्यवाद दीजिए, तथाकथित अशिक्षित, तथाकथित अपेक्षाकृत कम सभ्य समझे जानेवाले जनजातियों का जो हमारे आपके नायक को, स्वतंत्रता वीर को,वीर शहीद पुरुष को उसकी जन्मतिथि पर देवता की भांति पूज रहा है, जिसे इतिहास की किताबें अपने पन्नों में न्याय पूर्वक स्थान न दे पाई, उसे वेअपने हृदय के उच्चतम आसन पर बिठाकर उल्लास उत्साह के साथ संपूर्ण ग्राम में उमंग आह्लाद की रंगभूमि तैयार कर देते हैं। दिवस 11 फरवरी,उनके लिए न भूलने वाली तिथि : जन्म लिया उनके बाबा ने 1750 ईस्वी में बाबा तिलका मांझी, जो युवा वीर साबित हुआ नृशंस सत्ता के समक्ष। तिलका मांझी इतिहास की किताबों से भले ही गुम हैं , लेकिन आदिवासी समाज में आज भी कायम हैं। आदिवासी समुदाय में उन पर कहानियां कही जाती हैं, संथाल उन पर गीत गाते हैं। ऐसे कई जगह और कई कंठों से इन्हें 'स्वतंत्रता का आदि लड़ाका' कहकर पुकारा गयाययह भिन्न है कि स्थानीयता की परिधि इतनी कठोर, इतनी दृढ़ हो गई कि उसका परिचय हर भारतवासी तक आज तक दस्तक नहीं दे पाया।

1771 ईस्वी से 1784 ईस्वी तक ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध लंबी और कभी न समर्पण करने वाली लड़ाई लड़ना और स्थानीय महाजनों–सामंतों व अंग्रेजी शासकों की नींद उड़ाए रखना क्या इतना सरल था? 13 साल और वह भी केवल तीर धनुष के ही बल परय तोपों, सशक्त घुड़सवारों और अपने ही जयचंदों की विद्यमानता के बावजूद।

अंग्रेजों की नीति आदिवासियों की वन निर्भर जीवन शैली में कई व्यवधान और प्रतिकूलताएँ पैदा कर रही थीं। उनका वनसहगामी जीवन घुट रहाथा।

अंग्रेज और महाजन आपस में मिले होते और महाजन धोखे से उधार चुकाने में असमर्थ आदिवासियों की जमीन हड़प लेते। तिलका मांझी का बचपन, युवावस्था ये सब देखते हुये बीता। तिलकामांझी अर्थात् जबरा पहाड़िया (पूर्व नाम,यहां तक कि अंग्रेजों के कई रिकॉर्ड में भी यही नाम) ने 1770 ईस्वी के आते–आते अंग्रेजों से लोहा लेने की पूरी तैयारी कर ली। वो लोगों को अंग्रेजों के आगे सिर न झुकाने के लिये प्रेरित करते। उस समय उनके भाषण में जात–पात की बेड़ियों से निकल कर, अंग्रेजों से अपना हक छीनने जैसी बातें होती कितना आगे की सोच, कैसी प्रतिबद्धता का दर्शन है यह।

1770 ईस्वी में बंगाल में पड़े भीषण अकाल के बावजूद अंग्रेजों की दोगुनी टैक्स नीति से कई कई भूख के ही शिकार हो गये, तिलका मांझी ने भागलपुर (बिहार) में रखा खजाना लूट लिया। टैक्स और सूखे की मार झेल रहे गरीबों और आदिवासियों में मांझी ने लूटे हुये पैसे बांट दिए। लोगों में वो रॉबिन हूड जैसे ही मशहूर हो गये।

बंगाल के तत्कालनी गवर्नर, वारेन हेस्टिंगस ने तिलका मांझी को पकड़ने के लिये 800 की फौज भेजी। तब आक्रोशित 28 वर्षीय तिलका ने 1778 ई. में पहाड़िया सरदारों से मिलकर रामगढ़ कैंप पर कब्जा किए हुए बंदूक, गोले वाले अंग्रेजों को खदेड़ कर कैंप को मुक्त कराया। 1784 ईस्वी में जबरा (तिलका) ने भागलपुर मुख्यालय पर आक्रमण कर अंग्रेज अफसर क्लीवलैंड को अपने तीर से मार डाला। यह वही क्लीवलैंड था, जिसने आदिवासी एकता में सेंध लगाने के लिए आदिवासियों को नौकरी का प्रस्ताव देने के साथ–साथ संथाली भाषा तक सीख ली और दूसरी ओर जबरा साल के पत्तों पर संदेश लिख– लिख अन्य सरदारों को भेजते रहें ताकि उनकी लड़ाई में फूट का बीज न पड़े। तिलमिलाई अंग्रेजी सेना ने आयरकुट के नेतृत्व में जबरा की गुरिल्ला सेना पर जबरदस्त हमला किया, जिसमें कई लड़ाके मारे गए और कई दिनों के बाद 12 जनवरी, 1785 ईस्वी को जबरा को भी गिरफ्तार कर लिया गया। कहते हैं उन्हें चार घोड़ों में बांधकर घसीटते हुए भागलपुर लाया गया। पर मीलों घसीटे जाने के बावजूद वह पहाड़िया लड़ाका जीवित था। खून में डूबी उसकी देह तब भी गुस्सैल थी और उसकी लाल–लाल आंखें ब्रितानी राज को डरा रही थी। भय से कांपते हुए अंग्रेजों ने तब भागलपुर के चौराहे पर स्थित एक विशाल वटवृक्ष पर सरेआम लटका कर उनकी जान ले ली। हजारों की भीड़ के सामने 35 वर्षीय यह महावीर जबरा पहाड़िया उर्फ तिलका मांझी हंसते– हंसते फांसी पर झूल गए। तारीख थी 13 जनवरी, 1785 ईस्वी। बाद में आजादी के हजारों लड़ाकों ने जबरा पहाड़िया का अनुसरण किया और फांसी पर चढ़ते हुए जो गीत गाए – **हांसी–हांसी चढ़बो फांसी ...!** वह आज भी इस आदिविद्रोही की याद दिलाते हैं।

1991 ईस्वी में बिहार सरकार ने भागलपुर यूनिवर्सिटी का नाम बदलकर तिलका मांझी यूनिवर्सिटी रखा और उन्हें सम्मान दिया। इसके साथ ही जहां उन्हें फांसी हुई थी, उस स्थान पर एक स्मारक बनाया गया। तिलका मांझी के जीवन पर महाश्वेता देवी ने बांग्ला भाषा में 'शालगिरार डाके' लिखा है, जो हिंदी में 'शालगिरह की पुकार पर' नाम से अनुवादित और प्रकाशित हुआ है। राकेश कुमार सिंह द्वारा हिंदी में 'हुल पहाड़िया' लिखा गया है। शुक्रगुजार होना चाहिए हमें इन दोनों लेखकों का कम से कम इन्होंने अपनी कलम के द्वारा इस महानायक को जिंदा रखा है। वे महानायक जो स्थानीयता के आवरण में छद्म हो गए, उनकी प्रभा को, उनके शौर्य को अपने अपने स्तर से आवरणविहिन करना क्या हमारा आपका दायित्व नहीं? इस प्रश्न का भी सामना करना होगा अपनी थाती को संभालने के कार्य में कौन सक्षम साबित हुआ, कौन पीछे रह गया? हमने अपने जननायकों को, स्वातंत्रत्य वीरों को कब इस तरह पूजा, कब उनको देवतासम मान उल्लास मग में डूबे, कब इन विरुदावलियों को अपनी अगली और अगली पीढ़ी तक उत्सवमय वातावरण में रूपांतरित किया? कब??

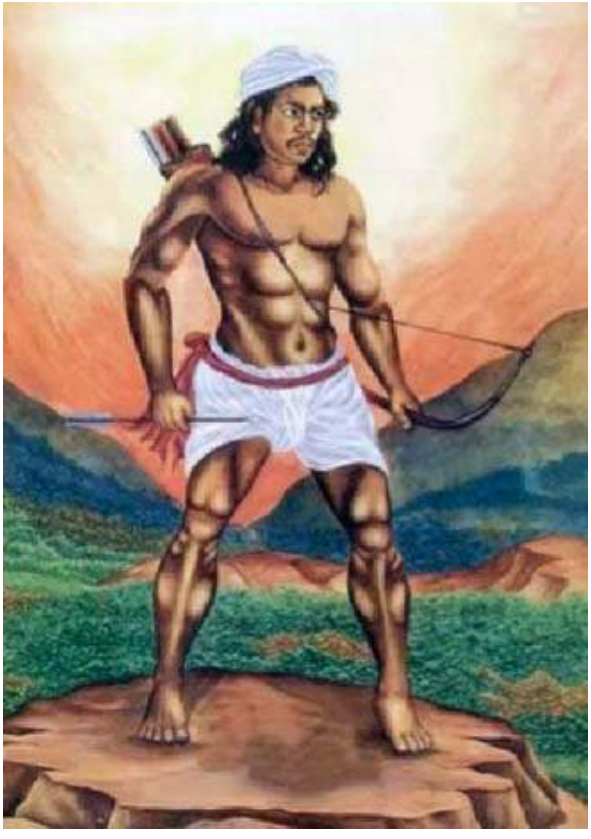

स्वतंत्रता संग्राम का आदि पुरुष संबंधित प्रश्नों के साये में

जीवन की जीवंतता का यथार्थ कुरेदती अबोधता के अनुत्तरित प्रश्न

बाल हृदय की गहराइयों में छिपी हैं समाज की भावी श्रेष्ठतम कल्पनाएं

डॉ. अजय शुक्ला
गोल्ड मेडलिस्ट इंटरनेशनल ह्यूमन राइट्स मिलेनियम अवार्ड
डायरेक्टर, स्प्रीचुअल रिसर्च स्टडी एंड एजुकेशनल ट्रेनिंग सेंटर
देवास, मध्य प्रदेश

'बालमन की आशा और विश्वास से भरी हुई अंतर्मन की बेचैनी अर्थात छटपटाहट का साक्षात्कार, समाज की विरोधाभासी स्थितियों के मध्य धीरे – धीरे धुंधला पड़ता जा रहा है जिसमें अभिभावकों की व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाओं से जुड़ी हुई अधिकतम व्यस्तता के आगे, अपने अस्तित्व की भीख मांगते बच्चों की दीन – हीन दशा और उससे उत्पन्न हुई दिशा आज सर्व मानव आत्माओं के समक्ष सबसे जीवंत प्रमाण के रूप में बनी हुई है। सब कुछ जानने एवं समझने की आपाधापी और होड़ से स्वयं को अलग – थलग पड़ता देखकर, उपेक्षा की पीड़ा अर्थात हृदय विक्षोभ से भर उठता है जिसकी किलकारियां केवल बाल्यावस्था की उपस्थिति का प्रतीक मात्र बनकर रह गई हैं।

'उजड़ते बचपन और बिखरते जीवन ' के मध्य बालमन के आत्मीय प्रतिनिधित्व में अंतरध्वनि का शंखनाद आज वैचारिक क्रांति के रूप में प्रज्वलित होने लगा है जिसे संपूर्ण सामाजिक परिदृश्य ने – ' बचपन बचाओ आंदोलन ... ' के तहत थाम रखा है और पुनर्जीवन की आकांक्षाओं को साकार करने में यथाशक्ति के साथ अनवरत संलग्न हैं। आज ' बाल हृदय की गहराइयों में छिपी हुई समाज की भावी श्रेष्ठतम कल्पनाएं अपने मुखर स्वरूप में यह अभिव्यक्त कर रही हैं कि –' अब धरती पर बड़े – बुजुर्गों का स्वर्ग अवतरित हो जाना चाहिए क्योंकि वहां कम से कम श्रेष्ठ अभिभावकों की प्राप्ति ... ' सुनिश्चित रूप से संभव हो सकेगी।

मानव जीवन की विराटता के अंतर्गत अबोध हृदय स्वयं की स्वतंत्रता का मौलिक विचार से युक्त प्रतिपादन – ' सजीवता के प्रति बालमन की उन्मुक्त अवधारणा को संपूर्ण रूप से धारण ...' कर सदा अग्रसर रहते हुए चिंतनशीलता को एक – ' नवीन आयाम प्रदान करके व्यावहारिक जगत में उपयोगी अर्थात सार्थकता पूर्ण कार्य संपादित ...' करने की अभिलाषा रखते हुए गतिशील रहता है। बालमन के मनोभाव से उत्पन्न स्थितियां अपने से जेष्ठ एवं श्रेष्ठ के प्रति आदर – सत्कार से भरपूर रहती हैं जिसमें बड़े – बुजुर्गों के द्वारा बच्चों को प्रदान किए जाने वाले – ' आशीष , स्नेह , दुलार , आत्मीय प्रेम और अति सूक्ष्म कोमल भावनाओं का अनवरत रूप से सम्मान तथा उन्हें मार्गदर्शन एवं परामर्श से संबद्ध ...' व्यवहार कुशलता की प्राप्ति का सुखद संयोग निश्चित ही – ' बचपन के अंतर्मन को संतुष्ट कर ही देगा यह अपेक्षा ...' बाल हृदय में सदा बनी रहती है ।

अबोधता के सुकोमल स्वरूप की सक्षमता में अभिवृद्धि करने के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण पक्ष – 'पारिवारिक शांति के साथ, सामाजिक समरसता हेतु श्रेष्ठ वातावरण के निर्माण का नैतिक उत्तरदायित्व, उत्कृष्ट पालना प्रदान करने में निपुण अभिभावक...' का होता है जिसमें राष्ट्र निर्माण की जीवंत पुनर्स्थापना हेतु भावी पीढ़ी के वृहद योगदान को निर्धारित किया जाना , जवाबदेही पूर्ण अति उपयोगी कार्य है। सामाजिक जीवन की संस्कारगत अनिवार्य, प्रतिबद्धता

बाल हृदय की विनम्रता से ओत– प्रोत होकर मन एवं बुद्धि के कुशल सामंजस के द्वारा प्रवाहित होती है जिसमें राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में नागरिक बोधगम्यता की जिम्मेदारी का निर्वहन संपूर्ण जवाबदेही के सानिध्य में संपन्न किया जाना आवश्यक होता है।

जीवन की जीवंतता का यथार्थ कुरेदती अबोधता के अनुत्तरित प्रश्न का 'यथोचित निष्पक्ष समाधान, भले ही जिस अपेक्षित मर्यादित एवं लोकोपयोगी स्वरूप में बाल हृदय प्रत्युत्तर की दीर्घकालीन प्रतीक्षा करते हैं जबकि उनकी प्राप्ति कई बार ' विलंब से होने के पश्चात भी बालमन की अभिभावक के प्रति भावपूर्ण मनोवृति , संपूर्ण समर्पण के रूप ...' में बनी रहती है जिसमें जीवन की संवेदनशील भूमिका का भूत , वर्तमान एवं भविष्य से जुड़ा हुआ पवित्र पक्ष सामान्यतः विद्यमान रहकर, नवसृजन नवांकुर, नवबोध – नवोदय , नवपथ – नवनीत , के व्यापक स्वरूप में सदैव गतिशील बना रहता है।

बाल हृदय की गहराइयों में छिपी हैं समाज की भावी श्रेष्ठतम कल्पनाएं, जिन्हें विश्व मानवता के निर्माण की आधारभूमि उज्जवल स्थितियों के व्यापक स्वरूप में प्रस्फुटित होने की सुनिश्चित संभावना को तलाशने की नैतिक जिम्मेदारी अभिभावक द्वारा स्वीकार करते हुए उजड़ते बचपन में बाल मन को छोटी – छोटी खुशियों की पोटली प्रदान करके , बाल जीवन की अंतरध्वनि के सकारात्मक संदर्भ और प्रसंग का संज्ञान लेकर स्वयं के अंतःकरण को सार्थकता की पृष्ठभूमि में ' परिवर्तित, रूपांतरित, परिवर्धित, परिमार्जित एवं परिष्कृत...' किया जाना अधिकारिक रूप से संपूर्ण– व्यक्तित्व, कृतित्व तथा अस्तित्व को आत्महित के सानिध्य में कल्याणकारी तथा सर्व लोक हेतु मंगलकारी स्वरूप में परिणित करने के समदृश्य स्वमेव ही सिद्ध हो जाता है।'

सजीवता के प्रति बालमन की उन्मुक्त अवधारणा : जीवन की जीवंतता का यथार्थ कुरेदती अबोधता के अनुत्तरित प्रश्न अर्थात अनसुलझे रहस्यों की खोज में भटकती मनःस्थितियां सचमुच बाल सुलभ चेष्टाओं का पर्याय होती हैं। समाज द्वारा प्रासंगिक घटनाओं और उनसे संबद्ध पहलू सामान्यतः स्वीकार कर लिए जाते हैं परंतु विरोधाभास की स्थिति निर्मित होने पर उन्हें कुछ समयावधि के लिए स्थगित कर दिया जाता है। जीवन की दुर्लभ अवस्थाओं के प्रति बाल हृदय सदा से ही उत्सुक रहा करता है जिसे किन्ही निर्धारित अवधारणाओं में कैद नहीं किया जा सकता है। बाल समझ की चिंता भले ही लोक व्यवहार में टाल दी जाती हो परंतु वह कभी भी , किसी भी स्थिति में सुप्त नहीं हुआ करती है। भाव भंगिमाओं के माध्यम से अपनी ओर आकृष्ट कर लेने की अद्भुत क्षमता बच्चों में सन्निहित होती है। साधारण स्थितियों में हमारे द्वारा ध्यान नहीं दिए जाने की कोशिशें, अबोधता की विभिन्न अवस्थाओं से जुड़ी प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सक्रियता के समक्ष प्रायः शिथिल ही पड़ जाती हैं। कई बार विभिन्न परिस्थितियों के अंतर्गत कुछ क्षणों का संतोष दिलाने की पहल का परिणाम भले ही कुछ समयावधि के लिए बाल हृदय की प्रसन्नता का सबब बन जाया करता है लेकिन वह वास्तविक सत्यता की खोज में अपेक्षित मनरूस्थिति के साथ संतुष्ट हो जाने की बात मन ही मन ढूंढता रहता है। सजीवता के प्रति बालमन की धारणाओं में निडरता का समावेश व्यावहारिक परिवेश में दिखाई देता है जबकि प्रबुद्धता से जुड़ी हुई अवधारणा का प्रतिफल किसी न किसी रूप में भयभीत स्थितियों की भयावहता से आक्रांत रहता है।

बाल सुलभ मनोभाव के व्यवहारिक मानदंड : व्यावहारिक जीव– जगत के गतिशील व्यवहार के अंतर्गत शारीरिक वेदना पहुंचाने वाली निर्जीव वस्तुओं के प्रति हम नकारात्मक भाव प्रदर्शित तो कर देते हैं परंतु अवचेतन मन में बदले की भावना को अति सूक्ष्म रूप से स्थाई– स्थान भी प्रदान करा देते हैं। सामाजिक दृष्टिकोण शीघ्रता से परिपक्वता के सपनों को देखता है और बाल सुलभ चेष्टाओं से विभिन्न स्तर पर व्यवहार करने के मानदंड अंतर्मन में ही निर्धारित कर लेता है। समझ और ज्ञान का सहसंबंध जब अपनी कल्पनाओं को रेखांकित करने का प्रयास करता है तब हम लापरवाही के वशीभूत होकर नासमझ होने का अभिनय करने लग जाते हैं। मानवीय हृदय की गहराई सामान्य तौर पर बालमन को उकेरती तो है परंतु दिशा दिग्दर्शन का निर्धारण अपने अनुसार करने की हठधर्मिता समाज के लिए प्रश्नचिन्ह छोड़ जाया करती है। पारिवारिक एवं सामाजिक संदर्भों के अंतर्गत सभी कुछ कुशलक्षेम स्वरूप में ही प्राप्त होगा, यह अपेक्षा बाल हृदय की गहराइयों में छिपी, श्रेष्ठतम कल्पनाओं के साकार स्वरूप में सदा ही विद्यमान रहा करती है जिसके परिणाम स्वरूप– मातृ देवो भवः , पितृ देवो भवः, आचार्य देवो भवः, सत्यं वद, धर्मं चर, के अनुकरण एवं अनुसरण में बालमन, जीवन पर्यंत निष्ठावान बना रहता है।

श्रेष्ठ वातावरण के निर्माण का नैतिक उत्तरदायित्व : परिवार जीवन की प्रथम पाठशाला है यह सत्य बाल हृदय की गहराई से अभिव्यक्त होता है क्योंकि यहीं से संपूर्ण कल्पनाओं का अभ्युदय होता हुआ स्पष्ट रूप से दिखलाई पड़ता है। माता– पिता की पालना का परिणाम जहां बच्चों के संपूर्ण व्यक्तित्व विकास का आधार बनता है वहीं शिक्षकीय पृष्ठभूमि में गुरुजी द्वारा शिक्षा– दीक्षा ग्रहण करने की क्रमबद्धता उसके संस्कार को परिमार्जित करने के साथ– साथ परिष्कृत भी करती है। एक नागरिक के रूप में अपने कर्तव्यों एवं अधिकारों का बोध उसे समाज से ही ज्ञात होता है जिसमें सहगामी बन जाने की अवस्थाएं बाल हृदय का मार्ग प्रशस्त किया करती हैं। बाल सुलभ चेष्टाओं में अवरोध की प्रबल संभावनाओं का स्थान सामान्य रूप से परिवार एवं समाज ही होता है जहां अच्छाई या बुराई का अवबोध वह विभिन्न स्थितियों एवं परिस्थितियों में स्वयं की जीवंत उपस्थिति दर्ज करके आसानी से कर सकता है। अभिभावक की जिम्मेदारी द्वारा उत्तरदायित्व के निर्वहन स्वरूप में – बालमन के प्रायः सभी क्रियाकलाप सहज रूप से बिना किसी निर्धारित एवं मर्यादित मूल्यांकन के स्वीकार किया जाना, जिसमें उचित एवं अनुचित के प्रति उदासीनता का भाव और विचार बच्चों के मूलभूत संस्कार निर्धारण का अति महत्वपूर्ण कारण बन जाया करता है। जीवन की संपूर्ण शक्ति के विनियोजन द्वारा श्रेष्ठ वातावरण की व्यवस्था बनाए रखने का उत्तरदायित्व किसी भी स्थिति में अभिभावकों का इसलिए हो जाता है क्योंकि संतानोत्पत्ति की सजगता का वास्तविक आधार सर्वप्रथम उनके

द्वारा ही व्यावहारिक रूप से सुनिश्चित किया जाता है।

राष्ट्र निर्माण की जीवंत पुनर्स्थापना में योगदान : बच्चों के लालन– पालन के प्रति सकारात्मक नजरिया माता– पिता की जिम्मेदारी ही नहीं बल्कि व्यापक संदर्भ में राष्ट्र निर्माण की जीवंत प्रक्रिया हेतु विशिष्ट योगदान भी है। शिक्षकीय समाज तक पहुंचने से पूर्व स्वभाव एवं आदतों का स्वरूप पूर्णतः परिवार एवं समाज द्वारा निर्धारित हो चुका होता है जिसमें विकास एवं परिमार्जन का पुट ही शेष रह जाता है। संस्कार परिवर्तन के प्रति गुंजाइश पूर्ण नजरिया बना भी लिया जाए उसके बावजूद भी जो कुछ विरासत में मिला है उसमें अत्यधिक दबावपूर्ण स्थितियां अर्थात बल प्रयोग के पश्चात भी बदलाव नहीं लाया जा सकता है । सामाजिक जीवन में प्रविष्टता का यथार्थ इस बात का प्रतीक है कि यथोचित स्वरूप में– 'एक संस्कार युक्त श्रेष्ठ नागरिक' की प्रवेशता समाज में हुई ह। परिवार से लेकर शिक्षा जगत की श्रृंखला से गुजर जाने के पश्चात तक की स्थिति, किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व के लिए संपूर्ण जीवन की यात्रा का वृतांत नहीं हो सकता है। अतः जीवन की संपूर्णता के विधिवत निर्धारण में समाज और उसका नैतिक रूप से दबाव ही एक जिम्मेदार नागरिक का सही दिशा में निर्माण कर सकता है। जीवन का यथार्थ जब समाज के सम्मुख प्रकट होता है तब वह प्रत्येक नागरिक के विभिन्न व्यवहार की परिणिति में सम्मिलित व्यापक स्वरूप का– 'सुखांत एवं दुःखांत के निहितार्थ से जुड़ा हुआ परिस्थितिजन्य फलितार्थ' होता है। किसी भी व्यक्ति को दोषी इसलिए नहीं माना जा सकता क्योंकि उसकी विविधतापूर्ण जीवन की पृष्ठभूमि का निर्माण पारिवारिक भावभूमि के साथ सामाज की अवधारणा से संबंधित परिदृश्य तथा परिवेश के वैचारिक स्वरूप में अनेकानेक व्यक्तियों एवं व्यवस्थाओं से जुड़ी– 'सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, मनोवैज्ञानिक, दार्शनिक, धार्मिक, आध्यात्मिक' तथा विभिन्न प्रकार के मत– मतांतर के मध्य हुआ है।

सामाजिक जीवन की संस्कारगत अनिवार्य प्रतिबद्धता : जीवन की विराटता के मध्य विभिन्न स्थितियों के निर्माण होने से लेकर उसमें एक निश्चित कालखंड गुजारने के पश्चात ही एक व्यक्ति अपने वास्तविक जीवन को सही तरीके से जी पाता है। व्यक्तिगत स्तर पर उत्पन्न होने वाली अच्छाई एवं बुराई के साथ निर्णयात्मक पहल का निर्धारण व्यक्ति के संस्कारों की तरफ इशारा किया करता है इसके साथ ही वह उसकी शिक्षा– दीक्षा तथा सामाजिक दबाव से उत्पन्न होने वाली स्थितियों का आकलन करने में भी पूरी तरह से सक्षम होता है। सामाजिक जीवन की प्रतिबद्धता जहां संस्कारगत स्वभाव को दर्शाती है वहीं वह उसके सफलतम उपलब्धिपूर्ण स्वरूप को उदाहरण के रूप में समाज के सामने पूरे विश्वास के साथ प्रस्तुत भी करती है। सुकोमल मनःस्थिति की परिणिति कठोरतम स्वरूप में आखिर कैसे? और किन परिस्थितियों में घटित हो गई? और हम स्वयं संपूर्ण परिदृश्य की विरोधाभासी स्थिति? को आधार बनाते हुए दोषमुक्त होकर मूक या बधिर कैसे हो जाएं? यह विधि की विडंबना नहीं बल्कि इसे समाज की अत्यंत गोपनीय साजिश ही कहा जाना उचित एवं न्याय संगत होगा।

राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में नागरिक बोधगम्यता की जिम्मेदारी : मनुष्य जीवन की गरिमापूर्ण स्थितियों के अंतर्गत अनायास ही कैसे एक मानव जाति की उत्पत्ति का मानवीय स्वरूप? सामाजिक कुरूपता से जुड़े हुए कलुष अर्थात विपत्ति के रूप में दृष्टिगोचर हो रहा है? और उसके निर्माण के घटक अपने कर्तव्य पर प्रश्नचिन्ह लगाने से बचने के उपाय आखिर क्यों खोज रहे हैं? बाल हृदय को गोद में खिलाने से लेकर– जीवन की जीवंतता का यथार्थता से संबंध स्थापित करते हुए वास्तविक जीवन के पथ निर्धारण करने तक और समाज में गतिशील होने की बजाय अवरोध का रूप धारण करने वाला वह बालमन, आज इतना निरीह प्राणी कैसे हो गया? और क्या इसकी दशा और दुर्दशा का जिम्मेदार पारिवारिक पृष्ठभूमि से लेकर संपूर्ण समाज क्यों नहीं है? जीवन की सामान्य स्थितियों में अपने उत्तरदायित्व को सीमित दायरे में कैद रखने की प्रवृत्ति से बाहर निकलकर ही बाल हृदय की संवेदनाओं को अनुभव किया जा सकता है तथा जीवन के अंत तक चाहे वह निर्माण अथवा विनाश का कारक ही क्यों ना बने? इसकी संपूर्ण नैतिक जिम्मेदारी के साथ मूल्यपरक जवाबदेही परिवार और समाज को पूर्णरूपेण स्वीकार करनी ही होगी तभी हम नागरिक बोधगम्यता के सानिध्य में राष्ट्रीयता के बीज को श्रेष्ठतम संस्कारों के माध्यम से रोपित करके– 'मनुष्य , मनुष्यता और संवेदनशीलता का विधिवत रूप से निर्माण कर सकेंगे ।

बालमन की अभिभावक के प्रति भावपूर्ण मनोभूमि : ज्ञान , विज्ञान और अनुसंधान के सानिध्य में मानवीय चिंतन के विभिन्न पक्ष से संबंधित मनोवैज्ञानिक विश्लेषण आज इस बात की पुष्टि कर चुके हैं कि– बाल हृदय की संवेदनाओं के विभिन्न पक्ष बड़े ही सुदृढ़ रहा करते हैं जिसमें सकारात्मक मनोभाव अपने सबल स्वरूप में विद्यमान रहते हुए संपूर्ण सक्रियता के साथ सदा क्रियाशील होते हैं। मातृबोध से प्रारंभ हुआ विराटता से युक्त विशाल नजरिया, मानवता को इंगित करते हुए राष्ट्रीयता के अवबोध तक स्वयं को– निमित्त, निर्माण और निर्मलता के उज्जवल स्वरूप में बनाए रखता है जहां केवल उसे प्रेरणात्मक रूप से उत्सर्जित करने की आवश्यकता ही होती है। बालमन की अभिभावक के प्रति भावपूर्ण रागात्मकता उनकी अनिश्चितता का प्रतीक ही नहीं है बल्कि सुरक्षात्मक पहलुओं को भी स्पष्ट करने से वह नहीं चूकते हैं। जीवन में शुभ भावना का स्वरूप जब स्वयं की अभिव्यक्ति को चेतना के पवित्र दिग्दर्शन के साथ प्रकट करता है तब अंतर्मन कह उठता है कि– हमारे साथ, परिवार का व्यवहार सुखद ही रहेगा तथा उनसे जुड़ी श्रंखला भी हमारा साथ निभाएगी, यह अंतःकरण में छिपे रहस्य भले ही सामान्य स्थितियों में उजागर नहीं होते हैं परंतु अपनेपन के एहसास का प्रमुख कारण अवश्य ही बन जाया करते हैं। यदा– कदा विरोध के स्वर अथवा प्रहार का प्रतीकात्मक स्वरूप में प्रकटीकरण होता हुआ बालमन के सम्मुख किसी कारण से परिलक्षित भी हो जाता है तो उसके प्रति नैसर्गिक रूप से उदासीनता के भाव स्वतः ही अंतर्मन में प्रस्फुटित होते देर नहीं लगती है।

जीवन की संवेदनशील भूमिका का वर्तमान स्वरूप : संपूर्ण

व्यक्तित्व के विकास में पारिवारिक वातावरण की खिन्नताएं जहां बाल मनःस्थिति के व्यवस्थित विकास में अवरोध का कारण बन जाया करती हैं वहीं शैक्षणिक वातावरण द्वारा दबावपूर्ण नीति का भी मन मस्तिष्क पर विपरीत एवं गहरा आघात पहुंचता है। सामाजिक घटकों के अंतर्गत असामाजिक तथा नकारात्मक तत्वों से पूरी तरह उबा हुआ व्यथित, बालमन केवल अपनी सहज, सरल एवं प्रश्नवाचक शैली से युक्त अभिव्यक्ति की टोह में रहता है। बाल हृदय के अंतरजगत में यह मान्यता सदा विद्यमान रहती है कि इस दुनिया में सब कुछ सकारात्मक स्वरूप में ही है जिसमें समाधान की स्थितियां अति शीघ्रता से मुझे प्राप्त हो जाएंगी। व्यक्तिगत स्तर पर बच्चों के स्वभावगत स्वरूप में जीवन के भविष्य को लेकर– श्रेष्ठ, शुभ एवं पवित्र भाव जगत अंतःकरण में संजोए हुए सदा ही उपस्थित रहते हैं लेकिन यदा – कदा , उमंग और उत्साह के अभाव में बालमन के साथ घटित एवं फलित का वर्णन ..., अब अनायास ही वह बालक नहीं कर सकता है। भटकाव एवं अलगाव की अनुभूतियों से भरा हृदय एक सही ठिकाने की जुगाड़ में अपनी उत्पत्ति के संबंध में अनसुलझे पहलुओं की खोज में आज भी पूरी तन्मयता के साथ संलग्न है। हृदय विदारक घटनाओं का साक्षी– स्वयं ही व्यक्ति, सामाजिक व्यवस्था में संबद्धता के साथ विभिन्न समूहों से उनके उत्तरदायित्वपूर्ण व्यवहार के साक्ष्य मांग रहा है ताकि वह अपने जीवन की स्पष्ट एवं पारदर्शी भूमिका आज की प्रासंगिकता के अनुरूप तय कर सके। स्वर्ग एवं नर्क की कल्पनाओं में जीने वाला मनुष्य आज अपने ही व्यक्तिगत एवं सामाजिक स्वरूप में स्वयं के वर्तमान की दशा और दुर्दशा से इस कदर निराश एवं हताश हो चुका है कि उसे सुधारने हेतु वह स्वयं को सक्षम बना पाने के विविध उपाय ढूंढने में निरंतर रूप से लगा हुआ है।

विश्व मानवता के निर्माण की आधारभूत स्थितियां : सामान्यतः अपने ऐसो आराम में क्षणिक स्तर पर कटौती के भय से अतीत पर रोने एवं हास्य के अभिनय करने वाले समाज ने अपनी संतति को तरजीह देने की तकल्लुफ कभी भी नहीं की। जीवन के आध्यात्मिक पक्षों की विराटता को नासमझी की स्थितियों में सराबोर कर, आज का समाज अपनी संरचना को खंडित धर्म की स्थिति ही बताना चाहता है जिसमें वह, अर्थात नई पीढ़ी चिंतन के पक्ष में– मैं और मेरा संप्रदाय ही सर्वश्रेष्ठ हैं, के दावानल में जलते हुए जीवन व्यतीत कर सके। मानवता की चादर ओढ़कर केवल जाति एवं उप जातियों के स्वरूप में विभाजित हुआ समाज अपनी उपाधि को ढोने का अभिमान रखते हुए अपनी संतानों के सुकोमल मन पर, एक अंधकार युक्त धब्बा छोड़ना चाहता है जिससे कि वह विश्व मानव बनने ...की बजाए एकांगी परिवेश के अंतर्गत केवल अभिभावक के भौतिकता से युक्त सुख को भोगने का अंश मात्र ही बनकर नहीं रह जाए । जीवन की जीवंतता का यथार्थ कुरेदती अबोधता के अनुत्तरित प्रश्न का ' यथोचित निष्पक्ष समाधान , भले ही जिस अपेक्षित– मर्यादित एवं लोकोपयोगी स्वरूप में बाल हृदय प्रत्युत्तर की दीर्घकालीन प्रतीक्षा करते हैं जबकि उसकी प्राप्ति कई बार 'विलंब से होने के पश्चात भी बाल मन की अभिभावक के प्रति भावपूर्ण मनोवृति, संपूर्ण समर्पण के रूप ...' में बनी रहती है जिसमें जीवन की संवेदनशील भूमिका का– भूत, वर्तमान एवं भविष्य से जुड़ा हुआ पवित्र पक्ष सामान्यतः विद्यमान रहकर, नवसृजन– नवांकुर, नवबोध– नवोदय, नवपथ– नवनीत के व्यापक स्वरूप में सदैव गतिशील बना रहता है।

उजड़ते बचपन में बिखरते जीवन की अंतरध्वनि : बालमन की आशा और विश्वास से भरी हुई अंतर्मन की बेचैनी अर्थात छटपटाहट का साक्षात्कार, समाज की विरोधाभासी स्थितियों के मध्य धीरे– धीरे धुंधला पड़ता जा रहा है जिसमें अभिभावकों की व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाओं से जुड़ी हुई अधिकतम व्यस्तता के आगे अपने अस्तित्व की भीख मांगते बच्चों की दीन– हीन दशा और उससे उत्पन्न हुई दिशा, आज सर्व मानव आत्माओं के समक्ष सबसे जीवंत प्रमाण के रूप में बनी हुई है। सब कुछ जानने एवं समझने की आपाधापी और होड़ से स्वयं को अलग– थलग पड़ता देखकर, उपेक्षा की पीड़ा अर्थात हृदय विक्षोभ से भर उठता है जिसकी किलकारियां केवल बाल्यावस्था की उपस्थिति का प्रतीक मात्र बनकर रह गई हैं । ' उजड़ते बचपन और बिखरते जीवन ' के मध्य बालमन के आत्मीय प्रतिनिधित्व में अंतरध्वनि का शंखनाद आज वैचारिक क्रांति के रूप में प्रज्वलित होने लगा है जिसे संपूर्ण सामाजिक परिदृश्य ने 'बचपन बचाओ आंदोलन...' के तहत थाम रखा है और पुनर्जीवन की आकांक्षाओं को साकार करने में यथाशक्ति के साथ अनवरत संलग्न हैं। आज 'बाल हृदय की गहराइयों में छिपी हुई समाज की भावी श्रेष्ठतम कल्पनाएं अपने मुखर स्वरूप में यह अभिव्यक्त कर रही हैं कि 'अब धरती पर बड़े– बुजुर्गों का स्वर्ग अवतरित हो जाना चाहिए क्योंकि वहां कम से कम श्रेष्ठ अभिभावकों की प्राप्ति... ' सुनिश्चित रूप से संभव हो सकेगी।

इस प्रकार जीवन की जीवंतता का यथार्थ कुरेदती अबोधता के अनुत्तरित प्रश्नों– का सहज, सुलभ एवं सरलतम, समाधान सुनिश्चित रूप से बाल हृदय की गहराइयों में अदृश्य स्वरूप में छिपा हुआ है जो अत्यधिक दुर्लभ अर्थात मूल्यवान, अनमोल– सुख, शांति और आनंद से भरपूर तथा सामाजिक समरसता से सराबोर, समाज की भावी, श्रेष्ठतम से ओतप्रोत– श्रेष्ठ, शुभ एवं पवित्र कल्पनाएं, धरोहर के रूप में विद्यमान हैं जिन्हें विश्व मानवता के निर्माण, परोपकार एवं कल्याण की आधारभूमि द्वारा उज्जवल स्थितियों के व्यापक स्वरूप में प्रस्फुटित होने की सुनिश्चित संभावना को तलाशने और उन्हें विधिवत तरीके से सदुपयोग करने की नैतिक जिम्मेदारी अभिभावक द्वारा स्वीकार करते हुए उजड़ते बचपन में बाल मन को छोटी– छोटी खुशियों की पोटली प्रदान करके, बाल जीवन की अंतरध्वनि के सकारात्मक संदर्भ और प्रसंग का संज्ञान लेकर स्वयं के अंतःकरण को सार्थकता की पृष्ठभूमि में 'परिवर्तित, रूपांतरित, परिवर्धित, परिमार्जित एवं परिष्कृत...' किया जाना, अधिकारिक रूप से संपूर्ण व्यक्तित्व, कृतित्व तथा अस्तित्व को आत्महित के सानिध्य में कल्याणकारी तथा सर्व लोक हेतु मंगलकारी स्वरूप में परिणित करने के समदृश्य स्वमेव ही सिद्ध हो जाता है।'

यात्राएं

तनाव और अवसाद से भी बचाती हैं

डॉ. अरविंद जैन (विद्यावाचस्पति)
संरक्षक शाकाहार परिषद्
भोपाल

ऑफिस और घर के बीच समय निकालकर यात्रा पर जरूर जाएं। इससे आप तनाव मुक्त होंगी और आपका मेंटल हेल्थ मजबूत होगा।

यदि आप अकेले यात्रा करते हैं, तो आपको अपने–आपको समझने का अवसर मिलता है। अपनी पसंद–नापसंद को जान पाते हैं।

कोरोना महामारी की आशंकाओं के बीच टयात्रा पर रोक नहीं लगाई गई है। यात्रा करने वाले लोगों से एहतियात बरतने को कहा जा रहा है। ताकि लोग यात्रा का आनंद ले सकें और वे कोरोना महामारी से भी बचे रहें। हर प्रकार के तनाव को दूर कर देती है यात्रा। इसलिए मेंटल हेल्थ के लिए जरूरी है यात्रा।

फायदेमंद है यात्रा : ट्रेवल आप अकेले करें या साथ में, ये तनाव और अवसाद को दूर कर मेंटल हेल्थ को मजबूती देता है।

यात्रा हैप्पीनेस बढ़ाती है : जो लोग नियमित रूप से यात्रा करते हैं वे उन लोगों की तुलना में लगभग १० प्रतिशत अधिक खुश रहते हैं। जो शायद ही कभी यात्रा करते हैं या बिल्कुल यात्रा नहीं करते हैं। महामारी के दौरान शोधकर्ताओं ने पाया कि लोग तनाव और अवसाद के अधिक शिकार हुए। क्योंकि लोगों ने लॉक डाउन के कारण यात्रा नहीं की। यात्रा और खुशी के बीच एक कड़ी की पहचान की गयी। यदि आप अकेले यात्रा करते हैं, तो आपको अपने–आपको समझने का अवसर मिलता है। अपनी पसंद–नापसंद को जान पाते हैं।

सकारात्मक भाव उत्पन्न होते हैं : जब यात्रा की योजना बनती है, तो खुशी की लहर दौड पडती है। आप सारे काम खुशी और आनंद के साथ निपटाते जाते हैं। आप पर डेडलाइन पर काम पूरा करने का कोई भार नहीं होता है। जिन लोगों ने घर से बाहर प्रकृति के बीच समय बिताया। उन्होंने उन लोगों की तुलना में अधिक सकारात्मक भावनाओं की सूचना दी, जिन्होंने घूमने को प्रश्रय नहीं दिया। उनके मष्तिष्क में हैप्पी हॉर्मोन डोपामाइन और सेरेटोनिन का सीक्रेशन अधिक देखा गया।

यात्रा अवसाद के जोखिम को कम कर सकती है : अवसाद के जोखिम को कम करने के लिए यात्रा जरूरी है। ऑफिस स्ट्रेस का सामना कर रही महिलाओं/पुरुषों को जब ट्रेवल के लिए भेजा गया, तो उनमें अवसाद के लक्षण में कमी देखी गई।

ब्रेक के दौरान उन्होंने कम तनाव और अवसाद की सूचना दी। दरअसल, यात्रा लोगों को रोजमर्रा के जीवन से बाहर निकालती है। यदि व्यक्ति किसी प्रकार के तनाव का सामना कर रहा है, तो यात्रा के अनुभव उसे तनावमुक्त करते हैं।

यात्रा क्रिएटिव बनाती है : यदि आप थका हुआ महसूस कर रही हैं, तो ट्रैक पर वापस आने के लिए यात्रा उपयोगी हो सकती है। यात्रा और रचनात्मकता के बीच गहरा संबंध है। यात्रा क्रिएटिविटी पर प्रभाव डालती है। ट्रेवल करते समय हमें अलग–अलग कल्चर, लोगों, खानपान, जीवनशैली से रूबरू होने का अवसर मिलता है। इससे रचनात्मकता को बढ़ावा मिलता है।

यात्रा रिश्तों को मजबूत बनाती है : ट्रेवल के दौरान यदि आप अपने किसी रिलेटिव से मिलते हैं, तो उनके करीब महसूस करती हैं। आपका सामना उन सुखद अनुभवों से हो पाता है, जिनकी कभी आपने कल्पना की होगी। इससे घर–परिवार के लोगों के साथ संबंध मजबूत हो पाते हैं।

जिन लोगों ने अपने पार्टनर के साथ यात्रा की, यात्रा के बाद उनमें अधिक संतुष्टि देखी गई। यात्रा के कारण साथ समय बिताने का अधिक अवसर मिला। इससे दोनों को एक–दूसरे को अधिक बेहतर तरीके से समझने का अवसर मिला। दोनों के बीच कम्युनिकेशन बेहतर हुआ। उनके संबंध लंबे समय तक बने रहे।

आजकल संचार संसाधन उपलब्ध होने पर समय से पहले यात्रा का आरक्षण करा लेना चाहिए: जैसे रेल बस ,प्लेन रुकने की जगह जैसे होटल्स, रिसॉर्ट्स आदि।

जिस जगह जा रहे हैं वहां की जलवायु, वहां की भाषा, संस्कृति, खान पान के साथ कौन कौन से दर्शनीय स्थल हैं। जिससे मानसिक तैयारी होने से आप भरपूर यात्रा का आनंद उठा सकते हैं।

जितना कम आवश्यक सामान सुखद यात्रा होती हैं।

शिव वंदन

व्यग्र पाण्डे
गंगापुर सिटी
(राजस्थान)

हे सत्य सनातन
हे अनंत
हे शिव भोले
हे जगत–कंत

हे महादेव
हे शिवा पति
तव ध्यान मग्न
सब योगी–यती

हे नीलकंठ
हे गंगाधर
जय शंकरशंभू
हर हर हर

ले अतुल भक्ति
विश्वास धार
मैं रहा आज
तुझको पुकार

हे महारूद्र
हे मृत्युञ्जय
जय शिवशंकर
ना व्यापे भय

मम् वंदन को
स्वीकार करो
इस धरती के
संताप हरो...

हे शक्ति नियंता
संघारक
हे डमरू, त्रिशूल
के धारक

व्यक्तित्व की त्रिवेणी

अटलजी

डॉ. अर्चना प्रकाश
स्वतंत्र लेखन
लखनऊ, उ.प्र.

श्री अटल बिहारी बाजपेयी जी कवि, लेखक पत्रकार व राजनेता की त्रिवेणी थे। ऐसा अद्भुत संयोग किसी अन्य राजनेता के व्यक्तित्व में देखने को नहीं मिलता। वे कहते थे कि मैं संघ का स्वयं सेवक हूँ और जीवन के अंतिमक्षणो तक रहूँगा। अटल जी की जन सभाओं में भारी भीड़ उमड़ती थी। जिसमेंभाजपा व जनसंघ के अनेक विरोधी भी शामिल रहते थे। अटल जी ने 1951 में जनसंघ की स्थापना की और 1968 से1973 तक वे इसके अध्यक्ष भी रहे। वे लगभग चार दशकों तक भारतीय संसद के सदस्य रहे, एवम तीन बार प्रधनमंत्री भी बने। अटल जी (रा ज ग) सरकार के पहले ऐसे गैर कांग्रेसी प्रधानमंत्री थे जिन्होंने प्रधानमंत्री पद के पांच वर्ष बिना किसी समस्या के पूर्ण किये। उन्होंने लंबे समय तक राष्ट्र धर्म पत्रिका पांचजन्य,व वीर अर्जुन आदि राष्ट्रीय भावनाओ से ओतप्रोत पत्रिकाओ का निर्बाध सम्पादन किया। मेरी इक्यावन कविताएँ, राजनीति की रपटीली राहे, मृत्यु या हत्या, अमर आग है, आदि अटल जी की कुछ प्रमुख कृतियां हैं। अटल जी कहते थे कि सोचो और बड़ा सोचो क्यों कि सोच किसी के बाप की जागीर नहीं है। अपने भाषण में वे कहते थे कि छोटे मन से कोई बड़ा नहीं हो सकता और टूटे मनसे कोई खड़ा नहीं हो सकता। एक अन्य सन्दर्भ में उन्होंने कहा 'मनुष्य को चाहिए कि वह परिस्थितियों से लड़े। एक स्वप्न टूटे तो दूसरा गढ़े।' उनके ये वचन आज भी बेहद उपयोगी हैं।

संसद हो या संसद के बाहर अटल जी अपनी बात हमेशा बेबाक ढंग से रखते थे। उनका शब्दों का चयन ऐसा होता था कि चोटिल या व्यंग्य होने पर भी लोग हंगामा नहीं करते थे। देश की समस्याओं से वे कई बार बेहद चिंतित हुए, लेकिन चिंताओं के विषाद से उन्होंने आस पास का वातावरण कभी बोझिल नहीं होने दिया। चुभते हुए प्रश्नों पर बाजपेई जी ठहाके लगाते थे जो उनके उत्तर न देने की सुझपूर्ण युक्ति थी। वे कई बार प्रश्नकर्ता से ही पूछते थे कि क्या वास्तव में ऐसा हो रहा है। ये उनके प्रत्युतपन्न मति होने का सजीव प्रमाण था। इसी के द्वारा वे कठिनतम स्थिति को सहजता से पार कर लेते थे। धैर्य साहस व सहजता के उनमें अद्भुत समन्वय था।

लगभग पाँच दशक तक सक्रिय राजनीति करने वाले अटल जी अनेक महत्वपूर्ण पदों पर रहे। जिनमें केंद्रीय विदेश मंत्री व प्रधानमंत्री मुख्य पद हैं। सभी पदों पर वे घालमेल से दूर एवम भृष्ट राजनीति में भी बेदाग रहे। अटल जी विचारों से निडर व टूटते मूल्यों के समय भी

अडिग रहे। भारत सरकार ने उन्हें भारत रत्न सम्मान से अलंकृत किया, जो उन्हें श्रेष्ठता के शिखर पर स्थापित करता है। नेहरू गाँधी परिवार के प्रधान मंत्रियों के बाद श्री अटल जी का नाम भारत के उन चुनिंदा नेताओ में शामिल है, जिन्होंने अपने नाम व व्यक्तित्व के करिश्में से न सिर्फ सरकार बनाई वरन राजनीति में ईमानदारी व निष्ठा की एक सुदृढ सोच को स्थापित किया।

विरोधी पार्टियों के अपने दूसरे साथियों के साथ अटल जी को भी आपात काल मे जेल भेजा गया। सन 1977 में उन्हें जनता पार्टी की सरकार में विदेश मंत्री बनाया गया। इस दौरान संयुक्त राष्ट्र संघ के अधिवेशन में उन्हों ने हिंदी में भाषण दिया। इसे वे अपने जीवन का सुखद क्षण मानते थे। एन डी ए का नेतृत्व करते हुए वे मार्च 1978 से 2004 तक छह वर्ष भारत के प्रधानमंत्री रहे। उनकी सरकार ने 11 मई और 13मई 1998 को पोखरण में लगातार पाँच भूमिगत परमाणु परीक्षण विस्फोट कर के भारत को परमाणु शक्ति सम्पन्न देश घोषित कर दिया। उनके इस कदम से भारत विश्व मानचित्र पर एक सुद्रढ़ वैश्विक शक्ति के रूप में स्थापित हुआ।

एक कवि के रूप में उनकी एक रचना जो आज से लगभग साठ वर्ष पूर्व की है ,आज के हिंदुत्व को पूरी तरह समझाने में समर्थ है –

'हिन्दू तन मन हिन्दू जीवन, रग रग हिन्दू मेरा परिचय।
कोई बतावें कब हमने, काबुल में जाकर मस्जिद तोड़ी।
भू भाग नहीं शतशत मानव का, हृदय जीतने का निश्चय।'

अटल जी की इस कविता से संघ और भारत की सनातन परंपरा की प्रतिबद्धता का उल्लेख मिलता है। अनेको कवि सम्मेलनों में दूर दूर से लोग उन्हें सुनने के लिए आते थे। सर्वग्राही एवम सर्वस्पर्शी स्वभाव उनकी विशेषता थी। उन्होंने इंदिरा गाँधी की प्रशंसा करते हुए उन्हें दुर्गा का सम्बोधन प्रदान किया था ।पोखरण का जब दूसरा परीक्षण हुआ तो उसकी पहली जानकारी उन्होंने विपक्ष के नेता सोनिया और मनमोहन सिंह को चाय पर बुला कर दी। राजनीति में समाप्त हो रहे शिष्टाचार के काल मे उनका ये कार्य दिशाबोधक है।स्थानीय राजनीति में परिस्थितिवश जिन पार्टियों ने उनका साथ छोड़ा उन सभी के हृदय में दुख था।

भारतीय राजनीति के महानायक भारतीय जनता पार्टी के तिरानबे वर्षीय दिग्गज नेता, प्रखर वक्ता, कवि, लेखक व पत्रकार श्री अटल बिहारी जी इस संसार से विदा हुए तो पूरे राष्ट्र में लंबा सन्नाटा फैल गया। तिरानबे वर्षों का लंबा सफर पगडंडियों, राजमार्गो,गांवों एवम झोपड़ियों के अनुभव समेटे हुए समाज व राष्ट्र के बदलाव की सोच उजागर करता है। शाइनिंग इंडिया, व उदीयमान भारत को सजीव व साकार करता है। ऐसे युगपुरुष को शत शत नमन, शत शत नमन।

सन्दर्भ–यराजनीति के शिखर कवि अटल बिहारी बाजपेई ,पृष्ठ 16
मेरी इक्यावन कविताएँ पृष्ठ 5 व 112
नवभारत टाइम्स 27 मार्च 2014
दैनिक जागरण 17 अगस्त 2018
अटल बिहारी बाजपेयी के 34 अनमोल वचन ।

कोशिश की चिंगारी

सुजाता प्रसाद
लेखिका,
शिक्षिका सनराइज एकेडमी
मोटिवेशनल ओरेटर
नई दिल्ली

गिरते–गिरते ही, गिरते हैं, पत्ते शाखों से
उगते उगते पत्तों से, शाख शजर भर पाता है,
मत बहने दो अनमोल अश्रु मोती अब अपने
प्रबल प्रयासों से ही तो कोई आगे बढ़ पाता है।

आएगा, धीमे पाँव आएगा, चंपई सबेरा
स्वर्ण रश्मि रथ लिए, सूरज की किलकारी संग,
पर मत भूलो, कोशिश की चिंगारी से ही तो
तमस अंधियारा कोई रौशन कर पाता है ।

रेत महल से ही कहाँ होते हैं, सबके सब सपने
झरने भी तो झरते रहते हैं, दिन–रैन मनोरथ के,
टूटते हैं कितने सपने, पर जीवन कब मर पाता है
तप तप कर ही तो देखो सोना कुंदन बन पाता है।

नजर के आसमां से लगता है यूं कभी–कभी
सपनों का सूरज गया कहाँ, जब कभी छुप जाता है।
पर, चाँद भी तो आकर देखो, रात के माथे पर
झिलमिल उम्मीदों का झूमर, लटका जाता है।

पंच से पक्षकर

अंकुर सिंह
जौनपुर
उत्तर प्रदेश

हरिप्रसाद और रामप्रसाद दोनों सगे भाई थे। उम्र के आखिरी पड़ाव तक दोनों के रिश्ते ठीक–ठाक थे। दोनों ने आपसी सहमति से रामनगर चौराहे के पैतृक जमीन पर दुकान बनाने का सोचा, ताकि उससे उनको जो आय हो उससे उनका जीवन सुचारू रूप से चल सके।

दुकान का काम चल ही रहा था तभी हरिप्रसाद और रामप्रसाद के बीच कुछ बातों को लेकर विवाद हो गया और उनमें बातचीत होना बंद हो गया। जिससे उनकी दुकान का काम भी रुक गया। दोनों एक दूसरे पर खूब आरोप–प्रत्यारोप भी लगाने लगे। बढ़ते विवाद को देख उसे सुलझाने के लिए उनके पड़ोसियों ने मोहल्ले के कुछ लोगों को जुटाकर एक पंचायत बुलाई, परन्तु पंचायत के सामने भी दोनों आपसी विवाद को खत्म करने के लिए तैयार नहीं हो रहे थे। बल्कि एक दूसरे पर एक से बढ़कर एक आरोप–प्रत्यारोप लगाए जा रहे थे। पंचायत ने भी मामले को बढ़ते देख उन्हें कुछ दिनों के लिए एक–दूसरे से दूर रहने की कड़ी हिदायत दी जिससे उनका विवाद हिंसा का रूप धारण न कर सके। इसके साथ ही पंचायत ने दुकान के बचे आधे–अधूरे काम को पूरा करने की जिम्मेदारी गांव के एक पढ़े–लिखे व्यक्ति विनोद को दे दिया ताकि दोनों भाईयों के विवाद से उनके धन का नुकसान ना हो। हरिप्रसाद और रामप्रसाद ने भी विनोद को पंच परमेश्वर का दर्जा देते हुए दुकान के बचे हुए काम को पूरा करने के लिए विनोद के नाम पर सहमत हो गए।

प्रसिद्ध उपन्यासकार एवं कहानीकार मुंशी प्रेमचंद की कहानी पंच परमेश्वर की तरह यहाँ भी समाज में हरिप्रसाद का सम्मान उनके धन से तो रामप्रसाद का सम्मान उनके अच्छे व्यवहार की वजह से लोगों में था। परंतु, शास्त्रों में कहा गया है कि कलयुग में मूर्ख, चोर और बेईमान आदमी अपने पद और धन के कारण समाज में श्रेष्ठ होगा और उसके प्रति लोगों का झुकाव जल्दी होगा। ठीक वैसे ही विनोद का झुकाव हरिप्रसाद की तरफ जल्दी हो गया। विनोद हरिप्रसाद के हर बातों का अमल दुकान के कार्यों में करता और यदि रामप्रसाद इसका विरोध करना चाहता तो उसकी बातों को अनसुना कर देता या रामप्रसाद को तीन–पांच पढ़ा उसकी बात टाल देता। कुछ दिन तक ऐसे ही चलता रहा और धीरे–धीरे रामप्रसाद को भी इस बात का एहसास होने लगा की वह ठगा जा रहा है और उसके साथ अन्याय हो रहा है। उसने इसके संदर्भ में विनोद से सीधा बात करना ही उचित समझा।

अगली सुबह खेत और घर के जरूरी काम निपटा रामप्रसाद विनोद के घर जा पहुंचा और कहने लगा– 'विनोद भाई, पंचायत की सहमति पर मैंने आपको पंच परमेश्वर माना है और इसलिए एक पंच के नाते आपसे निष्पक्ष न्याय करने की गुहार लगाने आया हूँ।'

इतना सुनते ही विनोद गुस्से में रामप्रसाद को भला बुरा कहते हुए हरिप्रसाद के सामने उसकी तुच्छ औकात की बात करने लगा और हरिप्रसाद के तारीफों की पुल बांधने लगा। विनोद के इस स्वभाव और एक पक्षीय नजरिया को देखते हुए रामप्रसाद ने कहा– 'विनोद जी, भले ही आज मेरी आर्थिक औकात हरिप्रसाद से छोटी है, परन्तु हरिप्रसाद के चंद रुपयों के लालच में आपने अपनी जमीर बेचकर अपनी औकात पंच परमेश्वर जैसे ऊँचे दर्जे से गिराकर पक्षकार के स्तर की बना ली।'

इतना सुनते ही विनोद के चेहरे का रंग उड़ गया और रामप्रसाद अपने कंधे पर गमछा रखते हुए घर की तरफ चल पड़ा।